



॥ श्री बीतरामाय नमः ॥

दश धर्म भावना

धर्म का स्वरूप दशलक्षण रूप है । इन चिह्ननिकरि
अन्तर्गत धर्म जानिये है । उत्तम दमा, उत्तम मार्दव,
उत्तम आज्ञा, उत्तम सत्य, उत्तम शौच, उत्तम मयम,
उत्तम तप, उत्तम त्याग, उत्तम आश्रित्य, उत्तम नम्रचर्य,
ये दश धर्म के लक्षण हैं । ज्ञात धर्म तो वस्तु का स्वभाव
हीन कहिये हैं । लोक में जेते पदार्थ हैं तितने अपने स्वभाव
में कदाचित् नहीं छूटें हैं । जो स्वभाव का नाश हो जाय
जो वस्तु का अभाव होय, सो होय नहीं । आत्मा नाम
वस्तु का स्वभाव दमादिक रूप है अर कोषादिक कर्मजनित
उपाधि हैं, आरक्षण हैं । क्रोध नाम धर्म का अभाव होय,
जदि दमा नाम आत्मा का स्वभाव स्वयमेव रहें । एम् ही
मान का अभावतैं मार्दवगुण, अर माया के अभावतैं आर्चव
गुण, लोभ के अभावतैं शौचगुण इत्यादिक आत्मा के गुण

हैं ते कर्म के अभावसे स्वयमेव प्रगट होय हैं । तार्तै य उत्तम क्षमादिक आत्मा का स्वभाव है, मोहनीय कर्म के भेद क्रोधादिक कषायनिकरि अनादिना आच्छादित होय रहै हैं । कषाय के अभावसे क्षमादिक स्वाभाविक आत्मा का गुण उघडै है । अब उत्तम जमा गुणरू वर्णन करै हैं—

उत्तम क्षमा

क्रोध बैरी का जीतना सो ही उत्तम क्षमा है । कैयारू है क्रोध बैरी—स जीव के निरास करने का स्थान जे मयम-मान-सन्तोषमान-निराकुलतामान ताहू दग्ध करने अग्नि समान, सम्पद्दशनादिरूप रत्ननिका भंडाररू दग्ध करै है, यशह नष्ट करै है, अपयशरूप कालिमारू बवारै है, धर्म अधर्म का विचार नष्ट होय जाय है, क्रोधीके अपना मन वचन काय आपरू बश नाहीं रहै है । उद्भुत कमलहूकी प्रीतिरू क्षमाप्रमद म विगाडि मग्नन करै उत्पन्न करै है, क्रोधरूप राक्षस के बश होय सो अमत्य वचन, लोकरुनिन्द्य, भील-चाण्डालादिकनि के बोलन योग्य वचन बोलै है । क्रोधी ममस्त धर्म लोपै है, क्रोधी होय तर पिताने मारि नाएँ, मातारू, पुत्ररू, स्त्रीरू, बालकरू, स्वामीरू, सेवकरू मित्ररू मारि प्राणरहित करै है । अर तीनक्रोधी आपरा हू निषेध, शस्त्रतै मरण करै है, उषे मरान तथा परतादिकतै पतन करै है, रूप में पडै है । क्रोधीमी कोऊ प्रकार प्रतीति

नाहीं जाननी । क्रोधी है सो यमराज तुल्य है । क्रोधी
 होय सो प्रथम तो अपना ज्ञानदर्शन समादिक गुणनिक
 धारै है, पीछे कर्म क रसतैं अन्य का पात होय वा नाहीं
 होय । क्रोध क प्रभातैं महातपस्वी दिगम्बरमुनि धर्मतैं भ्रष्ट
 होय नरक गये हैं । यो क्रोध है सो दोड़ लोड़ का नाश
 करै है, मग पाप बन्ध कराय नरक पहुँचायै है, बुद्धि भ्रष्ट
 करै है, निर्दयी करद है, अन्यकृत उपकार भुलाय कृतज्ञ
 करै है । तातैं क्रोध समान पाप नाहीं । इस लोक में क्रोधा-
 दिय कषाय समान अपना पात करने वाला अन्य नाहीं
 है । जो लोक भूषणमान है महामान्य है, निनका दोड़
 लोक सुधरना है तिनही क समा नाम गुण प्रगट होय है ।
 समा जो पृथ्वी, तारा ज्यो सृष्टि का स्वमार होय सो समा
 है । अर मम्यज्ञ स्वरूपज्ञ हित अहितक समझकरि जो
 अममर्थनिकरि किया ह उपद्रवनिह आप समर्थ होय कक
 रागद्वेष रहित हुमा महै है, विमारी नाही होय है ताज
 उत्तम समा कहिये है । इहा उत्तम शब्द मम्यज्ञानमहित
 होनहूँ स्था है । उत्तम समा त्रैलोक्य मे मार है । उत्तम
 समा समार समुद्रत तारने वाली है । उत्तमा समा है सो
 रत्नत्रयहूँ धारण करने वाली है । उत्तम समा दुर्गति के
 दृष्टानिहूँ हरने वाली है । जाके समा होय ताक नरक अर
 विर्यञ्च दोड़ गतिनिभ गमन नाहीं होय है । उत्तम समा

की लार अनेक गुणनिका समूह प्रगट होय है । मुनीश्वरनि
 कू तो अति प्यारी उत्तम क्षमा है । उत्तम क्षमा का लाभक
 ज्ञानीनन चिन्तामणिग्न का लाभ समान लाभ मानै है ।
 अर उत्तम क्षमा ही मन की उज्ज्वलता करै है । क्षमागुण
 बिना मन की उज्ज्वलता अर स्थिरता कदाचित् ही नहीं होय
 है । वाङ्मन सिद्ध करने वाली एक क्षमा ही है । इहा क्रोध क
 जीतने की भावना ऐसी जाननी—कोऊ आपत् दुर्वचनादि
 करि दुःखित करै, गाली द, चोर कहै, अन्यायी, पापी,
 दुराचारी, दुष्ट, नीच वा दोगला, चाण्डाल, पापी, कुतर्कनी,
 ऐसै अनेक दुर्वचन कहै तो ज्ञानी ऐसी भावना करै—जो याका
 में अपराध किया है कि नहीं किया है ? जो में याका
 अपराध किया तथा रागद्वेष मोहका बशतें कोई बातकरि
 दुःखाया है तदि में अपराधी हूँ । मोरू गाली दना, गिफारू
 दना, नीच, चोर, कपटी, अधर्मी कहना न्याय है । मोरू
 इस सिवाय भी दण्ड देता सो भी ठीक है, मैंने अपराध किया
 है, मोरू गाली मुनि रोष नहीं करना ही उचित है । अप-
 राधीकू नरक म दण्ड भोगना पड़ै है । तार्तें मेरा निमित्त
 य याके दुःख भया तदि क्लेशित होय दुर्वचन कहै हैं ।
 ऐसा विचारकरि क्लेशित नाहो होय, क्षमा ही करै है । अर
 जो दुर्वचन कहने वाला मन्दकपायी होय तो आप जाय, क्षमा
 ग्रहण करानेकू कहै—भो कृपालु ! मैं अज्ञानी प्रमाद के

वश वा कषाय क वग होय आपरा चितर दुराया सो अर
 अपराध माफ कगऊ हैं । थागानै जेमा राम चूर करि
 नाहीं कर गा, एकरा चूरि जाय तारी चूरक महत् पुरष
 माफ कर हे । अर जो आगला न्याय रहित तीव्र कषाय
 होय तो राख अपराध माफ कराने को जाय नाहीं, काना
 न्तर म शोध उपशान्त दृष्टा पाई माफ करव । अर जो
 आप अपराध नाहीं किश अर ईर्ष्यामार्त करल दुष्टतातें
 आपर दुरंगन कहें, तथा अनेर दोष लगावें तो नानी
 निमित्तमलेग नाहीं कर, जगा निगार -चो मैं यास धन
 हरया होय, तथा जमीन जायगा तोंसी होय, तथा यारी
 जीविसा निगाडी होय, चुगली खाड होय तथा याका दोष
 कइयादि करै जो मैं अपराध किया होय तो मोर पश्चा-
 ताप करना उचित है । अर चो मैं अपराध नाहीं किया तनि
 मोर कुछ फिर नाहीं करना । यो दुवचन कहै है मो
 नामरू कहै है तथा कुल को कहै है । मो नाम मेरा स्वम्प
 नाहीं, जाति कुलादि मेरा स्वम्प नादा, मैं तो धायक हूँ,
 जाहू कहै मो मैं नाहीं । मैं हूँ ताहू वचन पहुँचै नाहूँ
 मोरू समा ग्रहण करना ही वेष्ट है । बहुरि जो या दुरंगन
 कहै है सो मुख याका अभिप्राय याका, जिह्वा, दन्त, चोटी,
 याका, अर शब्द अर पुद्गल याका । पण्डितान्दिहूँ दुरंगन
 उपज्या जाहूँ श्रवणरि मैं जो रिहारहूँ शब्दोहूँ मोरू कहै

पड़ी अनानता है । बहुरि जो ईर्ष्यामान दुष्ट पुरुष मोह गाली दे है, सो स्वभावपरि देखिये तो गाली कुछ वस्तु ही नहीं है, मेर क्या हूँ गाली लगो नहीं दीखै है, अबस्तु में देने लेने का व्यवहार—ज्ञानी होय मो कैसे मरन्य करै ।

बहुरि जो मोह चोर कहै, अन्यायी कपटी अधर्मी इत्यादि रहै, तदा ऐमा चिंतन करै—‘जो हे आत्मन् ! तू अनेक बार चोर हुआ, अनेक नन्द मे न्यामिचारी, जुआरी, अभक्ष्यभक्षी, भील, चोराल, चमार, गोला, दादा, गूसर, गवा इत्यादिक तिर्यंच तथा अधर्मी पापी कुनन्ती होय २ आया, अर ससार में भ्रमण करता अनर बार होऊ गा, अर कोऊ तोऊ कूरर शूरर चोर चाडाल रहै ताहू अरण्यरि तोऊ क्लेशित होना उडा अनर्थ है । अथवा ये दुष्टजन दुर्गचन कहै है मो याको अपराध नहीं, हमारा वाक्या पूर्व जन्म कृत कर्म का उदय है । सो याके दुर्गचन कहने क द्वारकरि हमारे कर्म की निर्जरा होय है । सो हमारे बडा लाभ है । इनका यह हू उपकार है जो य दुर्गचन कहने वाले पुण्यका समूह का तो दोष कहन करि नाश करै है अर मेरे मिये पापक दूरि करै है । ऐसे उपकारीतैं जो मैं रोप करू तो मो समान कोऊ अधम नहीं है । बहुरि यो तो मोऊ दुर्गचन ही क्या है, भारथा तो नहीं, रोपकरि भारने लागि जाय है, मोधी तो अपने पुत्र पुत्री स्त्री बालादिकरु मारै

हैं मो मोह माया नाहीं, यो भी लाभ है । अर जो दुष्ट आपह मारै तो ऐसा विचार—नो मोह माया ही, प्राण रहित तो नाहीं किना, दुष्ट तो आपका मरण नाहीं गिन करू भी अन्यह मारै है, यो भी मेर लाभ है । अर जो प्राण रहित रूँ तो ऐसा विचार—एह बार मरणो ही छो, कमको श्रुण चुक्यो । हम यहा ही कर्म क श्रुणरहित मये, हमारा धर्म तो नाहीं नष्ट मया । प्राणधाम तो धर्महीतें सफल है । ये द्रव्यप्राण तो पुद्गलमय है, मेरा नान दर्शन चमादिधर्म ये भावप्राण है, इनका घात क्रोधकरि नाहीं मया । इम समान मेर लाभ नाहीं हैं ।

बहुरि जो कल्याण रूप काय है तिनम अनेक विघ्न आवै ही हैं । जो मेर विज आया नो ठीक ही है । मैं तो अर नममानह आवैय करू । अर जो उपद्रव आते मैं क्षमा छाडि, विराह प्रीति हूँगा तो मोह दलि अन्य मद-नानी तथा कायर त्यागी तपस्वी धर्मतें शिबिल हो पायन, तो मेरा जन्म केवल अन्य के क्लेश क अघि ही मया । तथा मैं पीतगगधर्म धाम करक ह क्रोधी विहारी दुर्चन होऊ तो मोह देखि अन्य ह क्रोध म प्रवर्तने लागि जाय, तनि धर्म की मर्यादा मङ्गकरि पापकी परिपाटी चलाने वाला मैं ही प्रयान मया । तर्हि चमागुण प्राण जाते ह, धन अमिमान नष्ट होत ह मोह छाडना उचित नाहीं ।

बहुरि पूर्वे मैं अशुभ कर्म उपजाया ताका फल मैं ही
 मोगूँगा । अन्य जे जन हं वे तो निमित्तमात्र हैं । इनके
 निमित्तते पाप उदय नहीं आता तो अन्य के निमित्तते
 आता । उदय में आया कर्म तो फल दिये बिना टलता
 नहीं । बहुरि ये सांख्यिक अज्ञानी मेरे विषे क्रोशित होय
 दुर्वचनादिक करि उपद्रव करै हैं, अर जो मैं भी याने
 दुर्वचनादिक करि उत्तर करूँ तो मैं तत्त्वज्ञानी, अर ये
 अज्ञानी, दोऊ समान भया, हमारा तत्त्वज्ञानीपना निरर्थक
 भया । न्यायमागते उदयमें आया मेरा पापकर्म ताका मन्सुरा
 होते कौन विवेकी अपना आत्माका क्रोधादिकनिके बश
 फरे । ओ आत्मन् ! पूर्वे बाध्या जो अमाताकर्म ताका अर
 अन्य आया, ताका इलाजरहित अरोक जानि करक मम
 भावनिहैं महो । जो क्लेशित होय भोगोगे तो असाताका
 तो भोगोहीगे, अर नवीन बहुत असाताका बन्ध और करोगे ।
 ताते दोनहार दु खत नि शक्ति होय समभारते ही सहो ।
 ये दुष्टजन बहुत हैं, अपना सामर्थ्य करक मर रोपरूप
 अभिक्र प्रज्वलितकरि मेरा समभाररूप सम्पदाका दग्ध किया
 चाहै हैं । अर यहा जो अमारधान होय चमका छ्वाँड
 दूँगा तो अरय ही साम्प्रभाव नष्ट करिकै धर्म अर अपना
 यश का नाश करन धाना होय जाऊँगा । ताते दष्टनिश
 समर्थ म भावधान रहना उचित है । धानी मनुष्य तो नाहीं

सदा ज्ञान प्राप्त होना जानि
 होना जानि इति इति
 पेध्या जो मैं हूँ हूँ हूँ
 भया । अरु जो मैं हूँ हूँ
 परक मेरा हूँ हूँ हूँ
 तिनमें कैसे हूँ हूँ हूँ
 है । अथवा तल तल
 माम्यभावना अन्तर्गत
 परीक्षा-स्थान प्राप्त करने
 ये परीक्षा करने को ही
 मर्यादा है मेरे हित में
 नेत्र का धारक हूँ, मैं
 अधि म भूमि होय हूँ
 करने वाला, समाप्त हूँ
 चित्त जो द्रोह हूँ प्रमद हूँ
 मिथ्यादृष्टीनिक समाप्त हूँ

अरु दुष्ट अनर्था
 अरु क्षमा ग्रहण कराय
 न करै तो ज्ञान बन कम्
 करनेवाला वीर कोऊ
 अरु अरु

देव विष दूरि करवा चाहे, अर बाक जहर दूरि नाहीं होय तो वैद्य आप जहर नाहीं खाये है । जो यास विष दूर नाहीं भया तो मैं हूँ विष भक्षणकरि मरू—ऐसा न्याय नाहीं है । तैसे क्षानीनन ह दुष्टजन की पहले दुष्टता की जाति पहिचाने जो यो दुष्टता छाड़ेंगा वा नाहीं छाड़ेंगा वा अधिक दुष्टता धरिगा, ऐसा निवारि जो विपरीत परिणमत दखि ताहू तो उपदेश ही नाहीं देना । अर कुछ समझने लायक योग्यता दीखे तो न्याय वचन हितमितरूप कहना । अर दुष्टता नाहीं छाड़ै तो आप क्रोधी नाहीं होना । जो यो मोरू दुर्वचनादि उपद्रवकरि नाहीं ब्रम्हायमान करे तो मैं प्रशम भावकरि धर्मका शरण कसे ग्रहण करता ? तातें जो मोरू पीडा करने वाला है सो मोरू पापतें भयभीत करि धर्मसु सम्प्रन्य रगया है । तानें पीडा करने वाला हूँ मेरा प्रमादीपना छुडाय बडा उपकार किया है ।

बहुरि जगत मे केतेरू उपकारी तो ऐसे हैं जो अन्य-जन के सुख होने क निमित्त अपना शरीरकू छाड़ें हैं, अर धनकू छाड़ें हैं । तो मेरे दुर्वचन बन्धनात्मिक कहने म कहा जायगा ? मोरू दुर्वचन कह ही अन्य के सुख हो जाय तो मेरे क्या हानि है ? बहुरि जो अपनेकू पीडा करनेवालेतें रोष नाहीं करू तो बैरी के पुण्य का नाश होय है अर मेरे आत्मा क हितकी मिद्धि होय है । अर पीडा करनेवालेतें

गेय मर तो मेरे आत्मा का हित का नाश होय दुर्गति होय । यार्त प्राणनिरा नाश होते हू दुष्टनि प्रति क्षमा करना ही एक हित सत्पुरुष कहै है, तर्त आत्मन्याणकी मिद्धि के अर्थि क्षमा ही ग्रहण करो । अथवा दुष्टनिकरि दुर्वचनादिक पीडा करनेतैं मेरे जो क्षमा प्रगट मटै है सो मेरे पुण्य का उदयत या परीक्षाभूमि प्रगट भई है । जो मृतना कालतैं शीतराग का घम धारण किया सो अर श्लोकादिक क निमित्ततैं साम्यभाव रखा कि नाहीं रखा, एमी परीक्षा मर । बहुत मोई साम्यभाव प्रशमा-योग्य है, अर मो ही कन्याण का काण है जो मारने के इच्छुन निदयी निरुरि मलीन नाहीं रिया गया । बहुत चिरमालतैं अम्याम किया शास्त्र कहे अर साम्य भाव कहे कहा साध्य है जो प्रयोचन पट्या व्यर्थ हो जाय है । धैर्य वो ही प्रशमा योग्य है जो दुष्टनिक दुर्वचनादि होते नाहीं छूट, छट रहे । उपद्रव आये जिना तो समस्त जन सत्य शीघ्र क्षमा के धारक बन रहे हैं । जैसे चन्दनवृक्ष कुन्हाडा काटै तीह कुन्हाड़े का मुखह सुगन्ध ही फरै, तैमें जाकी प्रशंति होय मोही मिद्धि साध्या है ।

बहुनि अन्यकरि किया उपमर्गतैं वा स्वयमेव आया उपसर्ग तिनकरि जाका चित्त क्लुपित नाहीं होय सो अनिनाशी सम्पदाक प्राप्त होय है । अज्ञानी हैं ते अपने भारति-

करि पूर्व किया पापकर्म ताके अधि तो नाहीं रोष करे अर
जो कर्म के फल देन के आयनिमित्त तिनि प्रति क्रोध करे
है । निम कर्म का नाशते मेरा ममार का सताप नष्ट हो
जाय सो कर्म स्वयमेव भोग्या तौ मेर बाछिन सिद्ध भया ।
मरुति यो ममारूप बन अनन्त सकलेशनि करि भरथा है ।
इसमे बसने वाला के नाना प्रकार क दुख नाहीं सहने
योग्य हैं कहा ? ससार में तो दुख ही हैं । जो इन ससार
में सम्पद्ज्ञान विवेकरि रहित अर जिनसिद्धावर्तों द्वेष करने
वाले अर महानिर्दयी अर परलोक का हितक अधि चिन्तन
बुद्धि नाहीं अर क्रोधरूप अग्निकरि प्रज्वलित अर दुष्टाकरि
सहित, विपर्ययनिकी लोतुपताकरि अन्ध, दृढग्राही, महा अभि
मानी, कृतघ्नी ऐसे बहुत दुष्टजन नाहीं होते तो उज्ज्वल
बुद्धि के धारक सत्पुरुष उत तपरचरणकरि मोक्ष के अधि
उद्यम कैसे करते ? ऐसे क्रोधी, दुर्गुण के बोलनहारे, दृढ
ग्राही, अन्यायमार्गीनिकी अधिकता देखि करके ही सत्पुरुष
वीतरागी भये हैं । अर जो मैं बड़े पुण्य के प्रभारतें परमा-
त्माका स्वरूप का ज्ञाता भया अर सर्वज्ञकरि उपदरया पदा
र्यनिरू ह निर्णयरूप जाणया अर ससार के परिभ्रमणादिकतें
भयभीत होय वीतरागमार्ग में ह प्रवर्तन किया, अब ह जो
क्रोध के बश हुगा तो मेरा ज्ञान चारित्र समस्त निष्फल
होयगा, अर धर्मका अपयश कटावनचारा होय दुर्गतिका पात्र हुगा ।

बहुरि और हू पद्मनन्दिभुनि कथा है—जो मूर्खजनकरि
 माया पीडा और क्रोध के बजन और हास्य और अपमाना-
 दिक होते हू जो उत्तम पुत्पनिमा मन विकारहू प्राप्त नाहीं
 होय ताहू उत्तमत्तमा कहिये है । सो चमा मोनमाग में
 प्रवतत पुरुष क प्रम मदायताहू प्राप्त होय है । विवरी
 चितवन कर है, हम तो रागद्वेषादिक मलरहित उज्ज्वल
 मनकरि तिष्टा, अन्मलोक हमहू खोटा कहो तथा मला
 कहो, हमहू कहा प्रयोजन है ? वीतरागधर्म क धारकानहू
 तो अपने आत्मा का शुद्धपना साग्ने योग्य है । जो हमारा
 परिणाम दोष सहित है और कोऊ कितू हमहू मला कहा
 तो मला नाहीं हो जायेंगे और हमारा परिणाम दोषरहित
 है और कोऊ हमहू बरमुद्धित खोटा कहा तो हम खोटा
 नाहीं हो जायेंगे । फल तो अपनी जमी चेष्टा आचरण
 होयगा वैसा प्राप्त होयगा । जैसे कोऊ काचकू रत्न कह
 दिया और रत्नहू काच कह दिया तो हू मोल तो रत्न ही
 पावैगा, काचखण्ड का बहुत धन कौन दबै ? बहुरि दुष्टजन
 है ताका तो स्वभाव परक दोष कहा हू नाहीं होय तो हू
 परक दोष कहा विना सुखहू प्राप्त नाहीं होय, तर्त दुष्ट-
 जन है सो मेरे माहीं अविद्यमान ॥ दोष लोभ, धर-धर म,
 समस्त मनुष्यनिग्रति प्रकटकरि सुगी होह, और जो धनका
 अर्था है सो मेरा सर्वस्व ग्रहणकरि मुखी होह,

गुणद्वय का अर्थ है मो शीघ्र ही प्राण हगे, अर स्थानभो
 अर्थ है मो स्थान हतो, मैं मध्यस्थ हूँ, रागद्वेष रहित हूँ,
 समस्त जगत् के प्राणी मेरे निमित्त हैं तो सुखरूप तिष्ठो
 मेरे निमित्त हैं सिंगी प्राणी क कोऊ प्रभार दु ख मति होह ।
 मैं घोषणाकरि कहूँ हू, क्योंकि मेरा जीवन तो आधुक्म
 का आधीन, अर धनरा अर स्थान का जायना रहना पाप
 का आधीन है । हमार किसी अन्य जीव से बर विरोध
 नहीं है, समस्त क प्रति समा है ।

गहुरि ह आत्मन् । जे मिथ्यादष्टि अर दुष्टता सहित
 अर हित अहित का विचकरहित मूढ ऐसे मनुष्यनिकरि
 किए जे दुर्नचनादिक उपद्रवनिहैं अस्थिर हुआ बाधाक मानि
 क्लेशित होय रक्षा है ताँ तीनों लोक का चूडामणि भगरान
 बीतराग है ताहि नाहीं जान्या कहा ? तथा बीतराग का धर्म
 की उपासना नाहीं कोइ कहा ? तथा लोकनिह मूर्ख नाहीं
 जान्या कहा ? मोही, मिथ्यादष्टि, मूढधी के ज्ञान तो विपरीत
 ही होय है, फर्मनिक बसि हैं ताँ इनम समा ही ग्रहण
 करना योग्य है । समा है मो इमलोक मे परमशरण है,
 माताही ज्यो रक्षा करने वाली है । बहुत कहा कहिये—निन
 धर्म का मूल समा, याके आधार सकलगुण है, कर्मनिर्जरा
 को कारण है, इनारा उपद्रव दूरि करने वाली है । याँ
 धन जाते, जीवितज्य जाते ह समाक छाडना योग्य नाही ।

फठोरता का अभाव होनेमें जो कोमलता होय सो मार्दवनाम
 आत्मा का गुण है । अर जो आत्माका अर मानरूपाय का
 भेदरू अनुभवकरि मान मद का छाड़ना सो उत्तम मार्दव
 नाम गुण है । मानरूपाय तो मसार का बधावने वाला है
 अर मार्दव मसार परिश्रमण का नाश करने वाला है । यो
 मार्दवगुण दयाधर्मका कारण है । अभिमानी के दयाधर्मका
 मूलहीमें अभाव जानना । फठोर परिणामी तो निर्दयी होय
 है । मार्दवगुण समस्तके हित करने वाला है । चिनके मार्द-
 वगुण है तिनही का घत पालना, मयम धारणा, नानका
 अभ्यास करना सफल है, अभिमानी का निष्फल है ।
 मार्दव नाम गुण मानरूपाय का नाश करने वाला है अर
 पंचइन्द्रिय अर मनरू दण्ड देने वाला है । मार्दव धर्म के
 प्रसातमें चित्तरूप भूमि में कृष्णा रूप बल नवीन फैले हैं ।
 मार्दव करक ही जिनेन्द्र भगवान् म तथा शास्त्रान म
 भक्ति का प्रकाश होय है । मद सहित क चिनेन्द्र क गुणनि
 में अनुगम नहीं होय है । मार्दवगुणकरि कृमतिमान क
 प्रसार का नाश होय है, कृमति नहीं फैले है । अभिमानी
 का अनेक दुःखि उपजै है । मार्दव गुणकरि बड़ा विनय प्रयत्न
 है । मार्दव करक बहुत कालका रैसी ह रैर छाडे हैं । मान
 घटे तदि परिणामनिकी उज्ज्वलता होय । कोमल परिणाम
 करक ही दोऊ लोभनी सिद्धि होय, कोमल परिणामीहु

इस लोक में सुयश होय है परलोक में दुवलोक की प्राप्ति होय है । कोमल परिणाम करिके ही अन्तरङ्ग बाहिरङ्ग तप भूषित होय है । अमिमानीया तप हू निंदये योग्य है, कोमलपरिणामीते तीन जगतक लोभनिश मन रत्नायमान होय है, मार्दव करिके विनेन्द्रिया शासन जानिये है, मार्दव करिके अपना परका स्वरूप अनुभव करिये है । कठोर-परिणामीक आपापरका प्रियेक नाहीं होय है । मार्दव करि क समस्त दोषनिका नाश होय है । मार्दव परिणाम समारममुद्रते पार करै है । याते मार्दवपरिणामक सम्यग्दर्शनका अग जानि निर्मल मार्दवधम का स्वप्न करो ।

समारीनीयनिक अनादिकालका मिथ्यादर्शनका उदय होय रहा है, ताका उदयरि पर्यायपुद्धि हुआ जातिहू, कुलहू, पिपाहू, ऐश्वर्यहू, रूपहू, तपहू, धनहू अपना स्वरूप मानि इनका गरूप होय रहा है । ताहू यह ध्यान नाहीं है जो ये जातिहूलादिक समस्त कर्मका उदयके अधीन पुद्गलके मित्र है, विनाशीक हैं, मैं अविनाशी नानस्वभाव अमूर्तीक हैं, मैं अनादिकालते अनेक जाति कुल बल ऐश्वर्यादिक पाय पाय छाडे है, मैं अत्र कौनमें आपा धारू । समस्त धन यौवन, इन्द्रियजनित ज्ञानादिक विनाशीक हैं, क्षणभंगुर हैं, इनका गर्व करना समारपतिभ्रमणका कारण है । इस ससारम स्वर्गलोका

महाशुद्धिका धारक देव मरि करि एक ममयमे ण्केटिय
 आय उपनै है तथा कृसर शसर चाडालाट्टिज पर्यायहू प्राप्त
 होय है । चक्रवर्ती नरनिधि चाँदद गन्ननिरा धारक ण्यममयमे
 मरि सप्तम नरकसा नारकी होजाय है । तथा बलमट नागपण
 का ऐश्वर्य नष्ट हो गया अन्य की कदा कथा है ? निनकी
 हजारों देव सेवा करें तथा तिनके पुण्य का क्षय होते
 कोऊ एक मनुष्य पानी देनेवाला है नाहीं गया, अन्य
 पुण्य-रहित जीव कैसे मदोन्मत्त बन रहें हैं । बहुतों जे
 उत्तम ज्ञानकरि जगतम प्रधान हैं अर उत्तम तपश्चरय
 करनेम उद्यमी हैं अर उत्तम दानी हैं ते हैं अपने आत्माह
 अति नीचा मानें हैं, निनके मार्दवधर्म हाँप हैं ।

विनयवानपना भद्ररहितपना समस्त धर्मका मूल हैं ।
 समस्त सम्यग्ज्ञानादि गुणकी आधार हैं । जो सम्यग्दर्शनादि
 गुणनिरा लाभ चाहो हो अर अपना उज्ज्वल यश चाहो
 अर वैरका श्मशान चाहो हो तो मदनिरु त्यागि कोमल-
 पना ग्रहण करो । मद नष्ट हुवा विना विनयादिक गुण, वचनरी
 मिष्टता, पूज्यपुरुषनिरा सत्कार, दान सन्मान एव हैं गुण
 नहीं प्राप्त होयगा । अभिमानीका विना अपराध समस्त
 पैरी होजाय है । अभिमानीकी समस्त निन्दा करै हैं ।
 अभिमानीका समस्त लोक पतन होना चाह है । स्वामी
 हैं अभिमानी सेवक हैं त्यागै हैं । अभिमानीक गुरुजन

विद्या देने में उत्साह रहित होय है, अपना सेवक पराङ्मुख हो जाय । मित्र, भाई, हितू, पड़ोसी, यात्रा पतन ही चाहें हैं । पिता गुरु उपाध्याय तो पुत्र गिष्य गिनयवन्त देख करि ही आनन्दित होय हैं । अग्निर्षी अभिमानी पुत्र या गिष्य बड़े पुरुष के मनहूत्र बतापित करे है । जानें पुत्र तथा गिष्य तथा सेवक तो ये ही धर्म हैं—जो नवीन कार्य करना होय सो पिता गुरु स्वामी जनाय करि करें, आज्ञा मागि करें तथा आज्ञा को अग्रसर नहीं मिलै तो अग्रसर दात शीघ्र ही जनार्ण, यो ही विनय है, याही भक्ति है ।

आज्ञा मस्तक उपरि गुरु रिराँ ते धन्य भाग हैं । गिनयवन्त मदरहित पुरुष हैं ते समस्त कार्य गुरुनि को जनाय दे हैं । अन्य हैं जे इम कलिसाल में मदरहित सोमल परिणामकरि समस्त लोक में प्रवर्तें हैं । उत्तम पुरुष हैं ते बालकमें, बृद्धमें, निर्धनमें, रोमीनिमें, बुद्धिरहित मूर्खनिमें, तथा जानिहुलादि दीन में हू यथायोग्य प्रियवचन, आदर सत्कार स्थानदान कृपाचित नहीं चूकें हैं, प्रियवचन ही करें । उत्तम पुरुष उद्धतता का वस्त्र आभरण नहीं पहें, उद्धतपणा करके अपमान का कारण देने-लेने प्रियादि व्यवहार कार्य नहीं कर हैं । उद्धत होय अभिमानीपना का चालना, बैठना, भ्रमना, घोलना दूर ही हैं छाड़ ताकें

लोभम पूज्य मार्तण्डगुण दोष हैं । धन पावना, रूप पावना, ज्ञान पावना, विद्याकलाधत्तुराई पावना, छेदर्य पावना, बल पावना, जातिदुलादि, उत्तमगुण, जगन्मान्यता पावना, तिन का सकल है जो उद्यततारहित, अभिमानरहित, नमता सहित, विनयमहित प्रार्ति है । अपने मनम आपसु सर्वतः लघु मानता कर्म क पावन जानै है, मो कैसे गरे रं ? नार्दी करै है । मन्यजन हो ? सम्यग्दर्शन का अङ्ग इम मार्तव अगुरु जाणि चित्तक रिपै ध्यान करो, स्तवन करो । ऐमै मार्तवधर्म को वर्णन किया ॥ ७ ॥

उत्तम आर्जव धर्म

अब आर्जव धर्मक वर्णन करै है—धर्मरा श्रेष्ठ लक्षण आर्जव है । आर्जव नाम सरलता का है, मन बधनपाप की कुटिलता का अभाव सो आर्जव है । आर्जव धर्म है मो पाप का एण्डन रगन गाला है अर सुर उपजाने वाला है । सार्नै कुटिलता छडि कर्म का चप करने वाला आचर धर्म धारण करो । कुटिलता है सो अशुभ कर्म का बन्ध करने वाली है, जगतम अतिनिन्द्य है । याने आत्मा का हितका इच्छुमनिह आर्जव धर्म का अलम्बन करना उचित है । जैसा आपके चित्त मैं चिन्तन करिये तैसा ही अन्यह कहना, अर जैसा ही बाह्यकार्यकरि प्रार्थन करिये सो मुख

॥ मचय करने वाला अर्चन धर्म कहिय है । मायाचाररूप
 शून्य मनतैं निकालो, उज्ज्वल पत्रिअ आनव धर्म का रिचार
 करो । मायाचार का प्रत तय मयम समस्त निरर्थक है ।
 आर्जवधर्म निर्माण क मार्ग का मढाई है । जहा कुटिल
 बचन नाहीं सोले तहा आर्जव धर्म प्राप्त हो हैं । यो आर्जव
 धर्म है सो दर्शननानशरित को अखडस्वरूप है, अर अती-
 द्रिय सुखमा पिटारा है । आर्जव धर्म का प्रभावफरि अती-
 द्रिय अविनाशी सुखक प्राप्त होण हैं । समारूप समुद्र के
 तरनेह जिहान रूप आर्जव ही हैं ।

मायाचार जान्या जाय तदि प्रीति का भङ्ग होय है,
 जैसे कानीतें दुग्ध फटि जाय है । अर मायाचारी अपना
 कपटह वस्तु छिपारन ह प्रगट हूया बिना नाहीं रह । पर-
 जीवनिरी चुगली करै ना दोष प्रमाण ते आपही प्रगट हो
 जाय हैं । मायाचार करना है सो अपनी प्रतीति का रिगा-
 दना है । मायाचारी का समस्त हितू रिना रिये बैरी होय
 हैं । जो प्रती होय, त्यागी-तपस्वी होय, अर पावा कपट
 एक बार रिषा ह प्रगट हो जाय ताहू ममन्त लोक अधर्मी
 मानि फोऊ प्रतीति नाहीं करै है । कपटीही माताह प्रतीति
 नाहीं करै हैं । कपटी तो मित्रदोही, स्वामीदोही, धर्मदोही,
 कृतज्ञी है अर यो जिनेन्द्र को धर्म तो कपटरहित छल
 रहित है । जैसे बाँस ध्यान म सुषो खड्ग प्रवेश नाहीं करै

तैसे कपटकरि वरपरिणामी का हृदय में जिनेन्द्र का आनन कहिये सरल धर्म प्रवेश नहीं कर सकें हैं । कपटी का दोऊ लोक नष्ट हो जाय है । यातैं जो यश चाहो हो, धर्म चाहो हो, प्रतीति चाहो हो, तो मायाचार का त्यागकरि आनन धर्म धारण करो । कपट रहितकी बनी हू प्रशमा करें हैं । कपटरहित, मरलचित्त, जो अपराध भी किया हो तो दण्ड देने योग्य नहीं हैं । आनन धर्म का धारक तो परमात्मा का अनुमन में समन्य करें हैं, कषाय जीतने का, सतोष धारने का सकल्प करें हैं, जगत क छलनिका दूरहीतैं परिहार करें हैं, आत्माक असहाय चैतन्यमात्र जानें हैं । जो धन सम्पदा हुदन्नादिफह अपनावैं सो ही कपट छलकरि टिगाई करें । तातैं जो आत्माक समार परिभ्रमणतैं छुटाय परद्रव्यनिर्तें आपक मित्र असहाय जानैं सो धन जीवितन्य क अर्थि कपट कदाचिन् नहीं करें । तातैं जो आत्माक-ससार परिभ्रमणतैं छुटाया चाहो सो मायाचारका परिहार करि आननधर्म धारण करो । ऐसे आननधर्म का वर्णन किया ॥ ३ ॥

उत्तम सत्य धर्म

अब सत्य धर्म का वर्णन करें हैं—जो सत्यवचन है सो ही धर्म है । जो सत्यवचन दयाधर्म को मूल कारण है, अनेक दीपनिका निराकरण करने वाला है, इस भयम तथा

परमगम सुखमा करने वाला है, समस्त के विरगम करनेका कारण है । समस्त धर्म का मध्य मत्परचन प्रधान है । सत्य है सो ससार समुद्र का पार उतारनेका जहाज है । समस्त विधाननि म सत्य है सो उदा विधान है । समस्त गुरु का कारण सत्य ही है । सत्यतैं ही मनुष्यजन्म भूषित होय है । सत्य करक समस्त पुण्य कर्म उज्ज्वल होय हैं । जे पुण्य के ऊँचे कार्य करिये हैं तिनकी उज्ज्वलता सत्य विना नाहीं होय है । सत्यकरि समस्तगुणनिमा समूह महिमाव प्राप्त होय है । सत्य का प्रभाकरि दर है ते सेवा करें हैं । सत्य करक ही अणुत्रत, महात्रत होय हैं । सत्य विना त्रत सजम नष्ट हो जाय है । सत्यकरि समस्त आपदा को नाश होय है । यातैं जो वचन बोलो सो अपना परका हितरूप कहो, प्रमाणीक कहो, कोउक दु रा अपने ऐमा वचन मति कहो, परजीवनि के बाधाकारी सत्य हू मति कहो, गर्व रहित कहो, परमात्मा को अस्तित्व कहने वाला वचन कहो, नास्तिकनि के वचन पाप पुण्य का, स्वर्ग नरक का अभाव कहने वाला वचन मति कहो ।

यहा ऐसा परमागम का उपदेश जानना—जो जीव अनन्तानन्तराल तो निगोदम ही रह्या । तहाँ वचनरूप कर्म वर्गणा ही ग्रहण नहीं करी, क्योंकि पृथ्वीकाय, अपकाय, तेजकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय इनका मध्य अनन्तराल

अमर्यादशाल रखो । तहाँ तो जिह्वा इन्द्रिय ही नहीं पाई, बोलने की शक्ति ही नहीं पाई । अर जो त्रिकल-चतुष्क में उपज्या तथा पचेन्द्रियतिर्यंचनि में उपज्या तदा निह्वा इन्द्रिय पाई तो हूँ अक्षरस्वरूप शब्द उच्चारण करने का सामर्थ्य नहीं भया । एक मनुष्यजन्म में बचन बोलने की शक्ति प्रकट होय है । ऐसा दुर्लभ वचनरू अमर्य बोलि बिगाड़ देना सो बड़ा अनर्थ है । मनुष्यजन्म की महिमा सो एक वचन हीत है, नेत्र, कर्ण, निह्वा, नासिका तो डोर तिर्यंचक हूँ होय है । सावना पीवना कामभोगादिक पुण्य पाप के अनुरक्त डोरनिक हूँ प्राप्त होय हैं । आभरण वस्त्रादिक कूड़ा, बानरा, गधा, घोड़ा, ऊँट, बलघ इत्यादिक-निकू हूँ मिलै हैं, परन्तु वचन कदने की शक्ति, श्रवण करने की शक्ति तथा उत्तर देने की शक्ति तथा पढ़ने पढ़ाने का कारण वचन तो मनुष्यजन्मम ही है । अर मनुष्यजन्म पाप जो वचन बिगाड़ि दिया सो समस्त जन्म बिगाड़ि दिया । बहुति मनुष्यजन्ममें जो लेना-देना, कदना-सुनना, धीन प्रतीन, धर्म-कर्म, प्रीति-वैर इत्यादिक जे प्रवृत्तिरूप अर निवृत्तिरूप कार्य हैं ते वचन के अधीन हैं । अर वचनरू ही दूषित कर दिया तडि समस्त मनुष्यजन्म का व्यवहार बिगाड़ दूषित कर दिया । ताँत प्राण जाते हूँ श्रवणा वचनरू दूषित मत करो ।

बटुरि परमागमम कहा जो ज्याहि प्रकार का असत्य वचन तारा त्याग करो । जो विद्यमान अधरा निषेध करना सो प्रथम असत्य है, जैसे कर्म भूमिका मनुष्य तिर्यंचका अकालमृत्यु नाहीं होय, ऐसा वचन असत्य है । जाँने देव नारसी तथा भोग भूमिका मनुष्य तिर्यंचका तो आयुसी स्थिति पूर्ण मया ही मारण है, बीच आयु नाहीं छिद्दै है, जितनी स्थिति बाची तितनी भोग करकै ही मरण करै है । अरु कर्मभूमिका मनुष्यतिर्यंचनिका आयु है मो विषका मरणकरि तथा ताडन, मारण, छेदन, बन्धनात्तिक वेदनाकरि तथा रोगसी तीव्र बन्नासरि तथा देहंत रुधिर ॥ नाश होनेकरि तथा दुष्ट मनुष्य दुष्ट तिर्यंच, भयसर देवकरि उपज्या भयकरि तथा वज्रपातादिक का स्वचक्र परचक्रादिक का मयकरि तथा शस्त्रका घातकरि तथा परतादिकत पतनकरि तथा अग्नि दहन, जल, कलह-गिसवादादिकतै उपज्या क्लेशकरि तथा स्वाम उग्रामका धूमादिवर्ते रुक्मसरि तथा आहारपानादिका निरोधकरि आयुका नाश होय है । आयुकी दीर्घम्यति हू विषमक्षण, गृहक्षय, भय, शस्त्रघात, सम्म्लेश, स्वामोद्धगम निरोध करि अन्न पानका अमारकरि तत्काल नाशहु प्राप्त होय ही है ।

कते लोक कहै हैं —आयु पूरी हुआ बिना मरण नाहीं

होय, ताका उत्तर कर हैं - जो वाद्य निमित्त आयु नहीं
 छिद्र तो विपमक्षणतः कौन परान्मुख होता ? अर विप खाने
 वालेकू उफाली काहकू देवे ? अर शस्त्रघात करने वालेतें
 काहकू भयकरि भागते ? अर सप, मिह, व्याघ्र, हस्ती, तथा
 दुष्ट मनुष्य तिर्यचादिकनिह दूरहीतें काहकू छाडते ? अर
 नदी समुद्र कूप पारदी म तथा अग्नि की ज्वाला म पडने तें
 कौन भय करता ? अर रोग का इलाज काहकू करते ? तातें
 बहुत कहने करि कहा, जो आयुघात होने का बहिरङ्ग कारण
 मिल जाय तो आयु का घात हो जाय, यह निश्चय है ।
 पहुरि आयुर्म्म की ज्यों अन्य हू कर्म बहिरङ्ग कारण मिले
 उदय आवै ही हैं, समस्त जीवनि क पाप कर्म पुण्य कर्म
 मत्ता में विद्यमान हैं । वाद्य द्रव्य क्षेत्र काल भागादि परिपूर्ण
 सामग्री मिले कर्म अपना रस देवै ही है । वाद्य निमित्त
 नाहीं मिले उदय में नाहीं आवै, तथा रस दिया बिना ही
 निर्जरै है । पहुरि जो असद्भूतकू प्रगट करना सो दूना
 असत्य है । जैसे देवनिर्क आरालमृत्यु कहना, देवनिर्क
 भोजन ग्रामादि रूप करना कह वा देवनिहू मामभली करना
 तथा मनुष्यनिक देवकरि कामसेवन तथा दवागनातें मनुष्य
 के कामसेवन इत्यादिक कहना दूना असत्य है । पहुरि वस्तु
 का स्वरूपकू अन्य निपरीत स्वरूप कहना सो तीना असत्य है ।
 पहुरि गदित वचन कहना सो चौथा असत्य वचन है । गदित

वचन का तीन भेद है—गर्हित, साध, अप्रिय ।

निनम पैशून्य, हास्य, कर्कश, अममजस, प्रलपित इत्यादिक अन्य दृष्टान्तरिद्ध वचन मो गर्हितवचन हैं । निनम जो परके निघमान तथा अप्रियमान दोषनिह पीठ पार्छे रहना तथा परका घनका विनाश, चीरिका का विनाश, प्राणीनिना नारा निम वचनतैं हो नाय तथा अगतम निघ हो जाय, अपशब्द हो जाय, ऐसा वचन कहना मो पैशून्य नामा गर्हित वचन है । बहुरि हास्य लीला भड वचन तथा भ्रमण करने वालेनिक अशुभ राग उपनामने वाले वचन सो हास्यनामा गर्हित वचन है । बहुरि अन्यत्र रहै तू दाडा है, तू मूर्ख है, अत्रानी हैं, मूढ है इत्यादिक कर्कश वचन है । बहुरि देश काल क योग्य नाहीं जातैं आपकै व अन्य के महा सताप उपनैं मो अममजस वचन है । बहुरि प्रयोजन रहित ठीठपनतैं उम्हाद करना मो प्रलपित वचन हैं ।

बहुरि निम वचनकरि प्राणीनिना घात होनाय, देशमें उपद्रव हो जाय, देश लुटि जाय तथा दश का स्वामीनिर्क महा बैर हो जाय तथा ग्राममें अग्नि लागि नाय, घर बल जाय, वन में अग्नि लग जाय तथा कलह रिसवाद पुद्द प्रभृति हो जाय तथा विषाद करि मरि जाय, बैर—बन्ध हो जाय तथा छहकाय के जीवनिके घात का प्रारम्भ हो नाय, महाहिंसाम प्रगति हो नाय मो साधवचन है । तथा परकु चोर कहना,

व्यभिचारी कहना सो ममस्त मायवचन दृग्गति क कारण
त्यागने योग्य है ।

अप्रियवचन त्यागने योग्य प्राण जाते हू नाहीं कहना ।
अप्रियवचन के भेद ऐसे जानने—कर्कश, कटु, परपा,
निष्ठुरा, परकोपनी, मध्यकृपा, अमिमानीनी, अनयकरी
छेदकरी, भूतयधकरी ये महापाप के करने वाली महानिध
दश भाषा मत्पराडी त्याग करै हैं । तू मूर्ख है, बलध है,
होर है, रे मूर्ख तू बड़ा समर्क इत्यादिक कर्कश भाषा है ।

बहुरि तू बुझाति है, नीच जाति है, अधर्मी महापापी
तू स्पर्शन करने योग्य नाहीं, तेरा सुग देख्या बड़ा अनर्थ
है इत्यादिक उद्वेग करने वाला कटु भाषा है । तू आचार
भ्रष्ट है, अटाचारी है, महादुष्ट है इत्यादिक मर्म छेदनेवाली
पन्पामाषा है । तोह मार नागिम्बू, धारै डाह लगास्यू,
धारो मस्तक काटिस्बू, तनै गाय जास्यू इत्यादिक निष्ठुरा
भाषा है । रे निर्लज्ज ! गणशङ्कर ! तेरा जातिकुल आचार
का ठिकाना नाहीं, तेरा कड़ा तप, तू बुशील है, तू हँमने
योग्य है, महानिध है, अमन्द्य मचस करने वाला है, तेरा
नाम लिषा बल लज्जित होय है, इत्यादिक परकोपनी भाषा
है । बहुरि जिस वचन क सुनत ही हाडनिकी शक्ति सामर्थ्य
नष्ट हो जाय सो मध्यकृपा भाषा है । बहुरि लोकनिम अथना

गुण प्रगट करना, परक दोष कटना, अपना कुल नाति रूप
 उस विज्ञानात्मिक मंडल लिये जो वचन बोलना सो अभिमा
 निनी भाषा है । बहुतरी शीलपण्डन करने वाली और मिद्वेष
 करने वाली अनयवगी भाषा है । गुरि जो दीर्घ शील गुणा-
 दिशनि क निर्मूल करने वाली, अमत्यन्त्रेय प्रगट करने
 वाली, जगत में झुठा कलक प्रगट करने वाली छेदकरी
 भाषा है । निम वचनरि अशुभ वेदना प्रगट हो जाय या
 प्राणनिर्वा नाश करने वाली भूतवधकरी भाषा है । ए दश
 प्रकार निधवचन त्यागने योग्य है ।

बहुतरि स्त्रीनिक द्वारभाज तिलाम रिधमरूप कीडा ध्यामि
 धारादिशनि की कथा कामक जगाने वाली, ब्रह्मचर्य का नाश
 करने वाली, स्त्रीनिकी कथा तथा भोजपान में राग करावने
 वाली मोहन की कथा, तथा रौद्र र्म कराने वाली रात्रकथा
 तथा चोरीनि की कथा तथा मिथ्यादृष्टि इलिंगीनिकी कथा,
 तथा घन उपार्जन कराने की कथा, तथा बेरी दुष्टनि के
 निरस्वार करने की कथा तथा हिंसाई पृष्ट करने वाली
 शास्त्रनि की कथा कहने योग्य नहीं, श्रवण योग्य
 नहीं । पापका आसन्नको कारण अग्रिय भाषा त्यागने योग्य
 है । भो ज्ञानी हो ! ये चार प्रकार की निन्द्य भाषा
 हास्यकरि, क्रोधकरि, लोभकरि, मदकरि, भयकरि, द्वेषकरि
 कदाचित् मति ऊढो । आपका परमा हितरूप ही वचन बोलो,

इस जीवकै जैसा सुग हितरूप अर्थसयुक्त मिष्ट वचन करें हैं निराहुल करें हैं, आताप हरें हैं, वैसा सुखकारी आताप हरने वाली चन्द्रकान्तिमणि, जल, चन्दन, मुक्ताफलादिक कोऊ पदार्थ नहीं । अर जहां अपने बोलनेतैं धर्म की रक्षा होता होय, प्रार्थानि का उपकार होता होय तहां गिन। पूछे ह बोलना, अर जहां आपरा अन्यरा हित नाहीं होय तहां मानमहित ही रहना उचित है ।

रहुरि मत्य वचनतें सकल रिद्या सिद्ध होय हैं । जहां रिद्या देन वाला सत्यवादी होय अर सीखने वाला ह मत्य वादी होय ताके सकल रिद्या सिद्ध होय, कर्म की निर्णय होय । सत्य का प्रभाव से अग्नि, जल, विप, सिद्ध, सर्प, दुष्ट, देव मनुष्यादिक बाधा नाहीं कर सकें हैं । सत्य का प्रभावतें देवता बशीभूत होय हैं, प्रीति प्रतीति दृढ होय है । सत्यवादी माता समान विश्वास करने योग्य है, गुरु का ज्यों पूज्य होय है, मित्र ज्यों प्रिय होय हैं, उज्ज्वल यशकू प्राप्त होय हैं, तपमयमानि समस्त सत्यवचनतें सोहे हैं । जैसे विप मिलनेकरि मिष्टमोचन का नाश होय, अन्याय करि धर्मका यश का नाश होय तैसे अमत्यवचनतें अहिंसादि सकलगुण निका नाश होय तथा असत्यवचनतें अग्रतीति, अक्रीति, अशराद, अपने वा अन्य के सबनेश, अरति, कलह, वैर, मय, शौर, रव, रन्धन, भरण, निहायेद, सर्वस्वहरण,

चर्दीगृह में प्रवेश, दुष्टान, अपमृत्यु, जल, तप, शील, मयम नाश, नरकादि दुर्गति में गमन, मगधान की आजा को मङ्ग, परमागमंत परान्मुखता, घोरपाप का आधर इत्यादि द्वारा दोष प्रगट होय है। यत्ते मो त नी जन हो। लोक में प्रिय हित मधुर वचन बहुत मर्या है, सुन्दर गन्त की कमी नादा, फिर निघ वचन क्यों बोली हो ?

रे तू इत्यादिक नीच पुत्पनि के बोलने के वचन प्राण जानें ह मत्रि फडो । अधमपना अर उत्तमपना तो वचन ही ते जायया जाय है, नीचनि के बोलने क निघवचनह छाडि प्रिय हित मधुर पथ्य धर्मसहित वचन फडो । जे अन्यह दु ए का देने वाला वचन कहें है तथा झूठा कलर लगारैं है तिनके पापत इहांही बुद्धि भ्रष्ट होय है, जिह्वा गलिनाय, अघा हो जाय, पग नष्ट हो जाय, दुष्टानतैं मरि नरक तिर्य चाणि दुर्गति का पात्र होय है । अर मन्य का प्रभावतैं इहां उज्ज्वल यश, वचन की सिद्धि, द्वादशाङ्गादि श्रुतका ज्ञान पाय किन् इन्द्रादिक महद्भिक देव होय तीर्थकरादि उत्तम पद पाय निर्माण जाय हैं । यत्ते उत्तम मत्यधर्मदाह धारण करो । ऐसे मत्यनामा धर्म का बखन किया ॥ ४ ॥

उत्तम शौच धर्म

अर शौच धर्म ॥ स्वरूप वर्णन करिये ह । ग्राव नाम पवित्रता उज्ज्वलता का है । जो बहिरामा दह का

उज्ज्वलता स्नातादिक करनेह शौच कहें हैं सो देह तो सप्त धातुमय मलमूत्र को भरयो जलतैं पोया शुचिपाक प्राप्त नाहीं होय है । जैसे मलका बनाया घट मलका भरया जलतैं शुद्ध नाहीं होय तैसे शरीर ह उज्ज्वल जलतैं शुद्ध नाहीं होय, शुचि मानना श्रया है । बहुति शौचधर्म सो आत्माह उज्ज्वल किए होय । आत्मा लोभकरि, द्वेषकरि अन्यन्त मलीन होय रखा है । सो आत्मा के लोभ मल का अभाव भये शुचिता होय है । जो अपने आत्माह देखतैं भिन्न ज्ञानोपयोग दर्शनोपयोगमय, असखड, अविनाशी, जन्मजरा मरण रहित, तीनलोकवर्ती समस्तपदार्थनि का प्रशङ्क, सदा फल अनुभव करै है, ध्याने है तारुं शौचधर्म होय है । बहुति मनह मायाचार लोभादिक रहित उज्ज्वल करने ताकै शौचधर्म होय है । जगत् मन काम लोभादिकरि मलीन होय ताकै शौच धर्म नाहीं होय है । धन की गृद्धिता जो अति लम्पटता ताका त्यागतैं शौचधर्म होय है ।

बहुति परिग्रह की ममताह छाँडि इन्द्रियनिका नियमनि को त्यागरि तपश्चरण का मार्ग प्रवर्तन करना सो शौच धर्म है । बहुति ब्रह्मचर्य धारण करना सो शौचधर्म है । बहुति अष्टमङ्करि रहित विनयमानपना भी शौचधर्म है । अभिमानी मदसहित होय सो महामलीन है । तारुं शौच धर्म कैस होय ? बहुति बीतराग सत्त्व का परमाणम अनुभव

शुद्धता कदाचित् नहीं होय । अमदय-भक्षण करने वाले निम्न अर अन्याय का विषय तथा धन के भोगनेवाले निम्न परिणाम ऐसे मलीन होय हैं जो कोटि बार धर्म का उपदेश अर समस्त सिद्धान्तनिम्नी शिक्षा बहुत वर्ष श्रवण करते ह कदाचित् हृदय में प्रवेश नहीं करै है, सो देखिये है । जिन कू पचाम वरस शास्त्र श्रवण करते भये हैं तोह धर्म का स्वरूप का ज्ञान जिनकू नहीं है सो समस्त अन्याय का धन अर अमदय भक्षण का फल है । तार्ने जो अपनी आत्मा का शौच चाहो हो सो अन्याय का धन मति ग्रहण करो अर अमदय भक्षण मति करो, परस्त्री की अभिलाषा मति करो । बहुरि परमात्मा क ध्यानतैं शौच है, अहिंसा सत्य अर्चाय ब्रह्मचर्य और परिग्रह त्यागतैं शौचधर्म है ।

जे पचपापनि में प्रवर्तने वाले हैं ते सदाकाल मलीन, है, जे पर क उपकारक लोप है ते कृतघ्नी सदा मलीन हैं, गुल्मद्रोही, धर्मद्रोही, स्वामीद्रोही, मित्रद्रोही उपकारक लोपने पाले हैं, तिनके पाप का सतान अमरव्याप्त भयनि में कोडि तीर्थनिमें स्नानकरि, दानकरि दूर नहीं होय है । मित्राण धाती सदा मलीन है । यातैं भगवान् के परमागम की आज्ञा प्रमाण शुद्ध सम्यग्दर्शन—ज्ञान चारित्रकरि आत्माह शुचि करो । क्रोधादिक कषाय का निग्रह करि उत्तमलभादि गुण धारण करि उज्ज्वल करो । समस्त व्यवहार कपट रहित

उज्ज्वल करो । परका विभर, ऐश्वर्य, उज्ज्वल यश, उत्तम विद्यादिक प्रभाव देखि, अंदरमका भायरूप मलीनता छाडि शौचधर्म अङ्गीकार करो । परका पुण्यका उदय देखि विपादी मति होह । इस मनुष्य पार्श्वक तथा इन्द्रिय ज्ञान बल आयु मरदादिकनिह अनित्य क्षणभंगुर जानि, एकाग्र चित्तकरि अपन स्वरूपम दृष्टि धारि, अशुभभावनिका अभाव करि आमाह शुचि करो । शौच ही मोक्षका मार्ग है, शौच ही मोक्ष का दाता है । ऐसै शौच नाम पंचम धम को वर्णन क्रियो ॥ ५ ॥

उत्तम सयम धर्म

अब सयम नाम धर्म का स्वरूप कहिये है । सयम का ऐसा लक्षण जानना—जो अहिंसा कहिये हिंसा को त्याग दया रूप रहना, दित, मित, प्रिय, सत्य वचन पोछना, अपने धनमें बाह्या का अभाव करना, हुशील का शृङ्खल, ग्रह त्यागना—ए पांच प्रत है । तिनमें पंचांग देश त्याग मो अणुप्रत है, सकल त्याग ईश्वर, इन पंचप्रतनिह दृष्ट धारण करना अर पंचांग, तिनमें गमन की शुद्धता ईर्यामिमिति है, सो भाषामिमिति है, निर्दोष शुद्ध ईश्वर ईश्वर ईश्वर मिमिति है, शरीर, उपकरणानि ईश्वर ईश्वर ईश्वर

उठावना धारणा सो आदाननिक्षेपणा ममिति है, मलमूत्र
 कफादिक मलनिरु अन्य जीवनि के ग्लानि दु ख बाधादि
 नाहीं उपजै ऐसे क्षेत्र म सेवना सो प्रतिष्ठापनामगिति है ।
 इन पंच ममितिनि का पालना अर क्रोध मान माया लोभ
 इन व्यास रूपयनिका निग्रह करना, अर मन, वचन, काय,
 की अशुभ प्रवृत्ति—ए दण्ड हैं । इन तीन दण्डनि का त्याग
 अर विषयनि म दौड़ती पंच इन्द्रियनि हू वश करना जीतना
 सो समय है ।

मार्ग—पंचव्रतनि का धारण, पंच ममिति का पालन,
 कपायनिका निग्रह, दण्डनि का त्याग, इन्द्रियनि का विजयक
 जिनेन्द्र क परमागम मे समय कहा है । सो समय बहुत
 दुर्लभ है । निनक पूर्वक बाये अशुभ कर्मनि का अतिमदपना
 होते मनुष्य—जन्म, उत्तम देश, उत्तमकुल, उत्तम जाति,
 इन्द्रियपरिपूर्णता, नीरोगता, कपायनिकी मदता होय अर
 उत्तमसगति अर जिनेन्द्र का आगमनि का सेवन अर सचि
 गुरुनि का सयोग, सम्यग्दर्शनादि अनेक दुर्लभ सामग्री का
 संयोग होय तबि समार देह भोगनिर्त अतिविक्तता के
 धारक मनुष्यक अप्रत्याख्यानावरण का क्षयोपशमते ती
 देशमयम होय अर जाये अप्रत्याख्यान अर प्रत्याख्यान
 दोऊ कपायनिका क्षयोपशम होय ताक सकल समय होय
 है । तात मयम पारना महादुर्लभ है । नरकगति में, तिर्यच

गति में, दशगति में तो मयम होय नहीं, कोउ तिर्यचकै
 दशगत अपनी पर्याय भाषिक कदाचित् होय है । अ
 मनुष्य पर्याय में भी नीचतादिमें, अवमदेशनिम, इन्द्रिय-
 विवृल, अज्ञाना, रोगी, दरिद्रा, अन्धकारमायी, विषयालुमायी,
 हीनरूपायी, निघरूमी, मिथ्यादृष्टीनकै मयम रदाचित्
 नर्तक होय है, तलैं मयमका पावना अतिदुलभ है । ऐसे
 दुलभ मयमक हू पाव सोऊ मूढबुद्धि विपर्ययिका लोलुपा
 होय छाटै तो अनन्तकाल जन्म मरण फटा समार में
 परिभ्रमण करै है ।

जो मयम पाव छाडै है, मयमक विगाटै है ताके
 अनन्तकाल निमोह में परिभ्रमण, त्रमस्थारगनि में भ्रमण
 करना होय, सुगति नहीं होय । मयम पाव विगाडने
 समान अन्य अनर्थ नहीं है । विपर्ययिका लोभी होय अति
 जो मयमक विगाडै सो एक कौडी में चितामणि रत्न बेच
 है, तथा ई धन के अर्थ कल्पवृक्षकृ छै है । विपर्ययिका
 सुख है सो सुख नहीं, सुखमाम है, नखमंगुर है, नखनि
 के घोर दुःखनि का कारण है । शिषाकल जैसे जिह्वा का
 स्पर्श मात्र मिष्ट लागै है पाछे घोर दुःख, महादुःख, महाप
 दय मरणक प्राप्त करै है तैसे भोग किंचिन्मात्र काल तो
 अज्ञानी जीवनिकृ अमर्त्य सुख-सा मातै है फिर अनन्तकाल
 अनन्तमरनि में घोर दुःख का भोगना है । यातैं मयम की

परम रक्षा करो । पाँच इन्द्रियनिर्गम विषयनिक सम्पन्नते रोक्नेतें मयम होय है । कषायनिका गडनकरि मयम होय है । दुर्द्धरतप का धारणकरि मयम होय है । रमनिका त्यागकरि सयम होय है । मनक प्रसार के रोक्नेकरि मयम होय है । महान कायक्लेगनिक मइने करि मयम होय है । उपरा सादिक धनशान तपकरि मयम होय है । मनम परिग्रह की लालसा का त्यागकरि मयम होय है । ग्रम स्थावर चीजन की रक्षा काना सो हो सयम है । मनक विग्रहनि क रोकनेकरि तथा प्रमादतें उचनकी प्रवृत्ति क रोकनेकरि सयम होय है । शरीर के अंग उपोगनिका प्रवर्तनक रोक्नेकरि सयम होय है । बहुत गमन क रोकनेकरि सयम होय है । बहुत दयारूप परिणामकरि सयम होय है । परमार्थका विचार करै तथा परमात्मा का ध्यान करक संयम होय है । सयम करै ही सम्यग्दर्शन पुष्ट होय । मयम ही मोक्ष का मार्ग है । सयम बिना मनुष्य-मन शून्य है, गुणरहित है । सयम बिना यो चीज दुर्गतिनिक प्राप्त भया । मयम बिना देह का धारणा, बुद्धिका पालना, ज्ञान का आराधना करना समस्त श्रुता है । मयम बिना दीक्षा धारणा, उत धारणा, मूढ मुडावना, नम रहना, भेष धारणा ये समस्त श्रुता है ।

जातें मयम दोय प्रकार है—इन्द्रिय सयम अर प्राणि मयम । जाकी इन्द्रिया विषयनित नाहीं रुकी अर नारु

छद्मस्वयं के नीयनि की गिरावना नाहीं टसो ताके बाध
 परीषद् मदन, सपरधर्य करना, दीक्षा लेना कृपा है ।
 सवार में दुखित जीवनिह मयम बिना कोऊ अन्य शरण
 नाहीं है । शानोवन तो ऐसी भावना भाव है—जो मयम
 बिना मनुष्य जन्म की एक घटिका हू मति जागे, मयम
 बिना आपु निष्कल है, जो मयम है सो इम मा में अर
 परमत्र में शरण है, दुर्गातिरूप सरोवर क शोषण करने
 धूर्य है, मयम करक ही समारूप विषम बैरी का नारा होय ।
 मसार-परिभ्रमण का नारा मयम बिना नाहीं होय । ऐसा
 नियम है जो अन्तरङ्ग मध्यायनिकरि आमाह मलीन नाहीं
 होन द है अर बाध यत्नागरी दुष्मा प्रमाद रहित प्रवर्त है
 ताके मयम होय है । ऐम मयम धर्म का वरुन किया ॥६॥

उत्तम तप धर्म

अथ तप धर्म का वर्णन करै है । इच्छा का निरोध
 करना सो तप है । तप प्यार आगधनानिम प्रधान है । जैसे
 सुर्याह तपाने करि सोला बार लगे, ममल मल छींड़ि
 करके शुद्ध होय है तैम आमा ॥ ढादश प्रकार तप क प्रचार
 करि कर्म-मल-रहित शुद्ध होय है । अगनी मिथ्यादृष्टि तो
 दहह पर अप्रिकरि तपारै है तथा अनेक प्रकार काय क
 फलोशह तप कहै है सो तप नाहीं है । काय क दग्ध-रिये

अर भार लिये रहा होय ? मिथ्यादृष्टि ज्ञानपूर्वक आत्मा
 उमरन्त्यतं छुटावना नाहा जानै है । कर्मफलक रहित आत्मा
 तो भेदज्ञान पूर्वक अपने आत्मा का स्वमायक अर रागद्वेष
 मोहादिरूप मैलक मल दूर है । जैसे राग द्वेष मोहरूप
 मल भिन्न हो जाय अर शुद्ध ज्ञान-दर्शनमय आत्मा भिन्न
 हो जाय सो तप है । यादीतैं बहैं हैं—मनुष्य भय पाप जो स्व
 पर तपत आया है तो मनमन्ति पच इन्द्रियनिक रोकि,
 विषयनिर्त शिरकाहीय, समस्त परिग्रहक छाडि, बन्ध करन
 वाली रागद्वेषमद प्रवृत्ति छाडि, पाप का आलम्बन छूटने
 क अर्थि ममता नष्ट परनेह धनमें जाय तप करिये । ऐमा
 तप वन्य पुरुषनि क होय है ।

मसारो जीव क ममता रूप बड़ी फासी है, सो ममता
 रूप जाल म फसा हुआ घोर कर्मक करता महा पाप का
 बन्धकरि रोगादिक की तीव्र वेदनातैं, अर स्त्री पुत्रादि समस्त
 दुःखक तथा परिग्रह का वियोगादिकतैं उपज्या तीव्र
 आतड्यानतैं मरण पाय दुर्गतिति के घोर दुःखनि क जाय
 प्राप्त होय है । तपोवनक प्राप्त होना दुर्लभ है । तप तो
 कोऊ महामाग्य पुरुष पापनिर्त शिरक होय, समस्त स्त्री पुत्र-
 वनादि परिग्रहतैं ममत्व छाडि, परम धर्म के धारक गीत
 राग निरग्रन्थ गुरुनि का चरणनि का शरण पावै है अर
 गुरुनिको पापकरि जाकै अशुभ कर्मका उदय अति मन्द

होय, मम्यस्त्वरूप धर्म को उदय प्रगट होय, समार विषय भोगनिर्तै शिक्षता जाई उपजी होय सो तप मयम ग्रहण करै है, अर जो एमा दुद्धर तपत्र धारण करै ह कोऊ पापी विषयनिश वाछाकरि सिगार्डे ताके अनन्तानन्त काल म फिर तप 'नाही प्राप्त होय है । यार्त मनुष्यमय पाय, तत्त्वनिश स्वरूप जानि, मनमहित पच इन्द्रियनिहू गेरि, पराग्यरूप होय, ममस्त मगट छाडि, वनम एकाकी, ध्यान म लान हुआ तिष्ठ मो तप है ।

जहा परिग्रह म ममता नष्ट होय गच्छारहित तिष्ठना तथा प्रचण्ड काम का खण्डन करना सो बडा तप है । जहा नम्र दिग्मयरूप धारि जीतरी, पवनरी, आतापकी, रपाकी तथा डाम, मच्छर, मक्षिका, मनुमक्षिका, सर्प, रिच्छु इत्यादिकतै उपनी घोर बटनाहू रोर अङ्गपरि सहना सो तप है । अर जो निर्जन परतनि की निजन गुफानि म, मयङ्कर परतनिक ढराइनिम तथा मिड, व्याघ्र, रीछ, ल्याली, चीता, हस्तीनिकरि व्याघ्र घोर वनमें निवास करना सो तप है । तथा दुष्ट री म्लेच्छ चोर शिकारी मनुष्य अर दुष्ट व्यतरादिक दानिकृत घोर उपसर्गनिर्त कम्पायमान नाहीं हाना । धीरवीरपनातै कायरता छाडि बैर विरोध छाडि ममताभारतै परमात्मा का ध्यान में लान हुआ सहना मो तप है । बटुरि समस्त जीवनिहू उल्लभाने गले रागद्वेषनि

कृ जीतना, नष्ट करना सो तप है । बहुरि जो पाचना रहित भिक्षाक अथसर म थावक का घर म नवधा भत्रिकरि हस्तम धरया सारा अलूणा कड़वा खाटा लूणा चीरुना रस नीरस, तिसम लोलुपता अर समनेश रहित निर्दोष प्राणुक आहार एक बार भक्षण करना सो तप है । बहुरि जो पच समिति का पालना अर मनचनकापर चलायमान नाहीं करना, अपना रागद्वेष रहित आत्मानुभव करना सो तप है । जो स्व पर तप्य गी कथनीका निर्णय करना, च्यार अनुयोग का अभ्यासकरि धर्मसहित काल व्यतीत करना सो तप है । बहुरि अभिमान छडि विनयरूप प्रवर्तना, कपट छाडि सरल परिणाम धारना, क्रोध छाडि समा ग्रहण करना, लोभ त्याग निर्वाञ्छक होना सो तप है । जागरि कर्मका समूह का नाशकरि आत्मा स्वाधीन हो जाय सो तप है ।

जो श्रुतका अर्थका प्रकाश करना, व्याख्यान करना, आप निरंतर अभ्यास करें, अन्यत्र अभ्यास फरारि सो तप है । तपस्वीनिका देवनिका इन्द्र स्तवन करें, भक्ति का प्रकाश करें, तप करि कवलज्ज्ञान उत्पन्न होय है । तपका अचित्स्थ प्रभाव है । तप के माहि परिणाम हाना अति दुर्लभ है । नरक तिर्यक्ष देवनिकें तपसी योग्यता ही नाहीं, एक मनुष्य गति मे होय, मनुष्य मे ह उत्तम कुल, जाति, बल, बुद्धि,

इन्द्रियनिमी पूर्णता चाके होय तथा विषयनिमी लालमा जाई नष्ट भई तार्क होय है । तप द्वादश प्रकार है । जाकी पैमी शक्ति होय तिम प्रमाण धारण करो, चालरु करो, शृद्ध करो, धनाढ्य करो, निर्धन करो, उलगान रगे, निर्मल करो, महाय महित होय मो रगे, सहाय रहित होय सो करो, भगवान् सो प्ररुप्या तप किमीई ह रग्नेह अगक्य नाहीं है । जैसे वायु, पित्त रूफादिका प्ररुप नाहीं होय, रोग की वृद्धि नाहीं होय, जैसे गरीर रत्नत्रय को सडसारी बन्यो रहै तैमें थपना महनन उल वीर्य देखि तप करो । तथा दश काल आहार की योग्यता देखि तप करो । जैमें तप में उत्साह बधतो रहै, परिणामति म उज्ज्वलता बधती नाय, तैमें तप करो । तथा जो इन्द्र्याका निरोधकरि विषयनि ॥ राग घटावना पो तप है । तप ही चीरसा बन्याण्य है, तप ही कामह निद्राह प्रमादह नष्ट करने गाला है । यात मद द्वाडि, नारह प्रकार तपमे पैमा जैमा करनेह सामर्थ्य होय तैमा ही तप करो । ऐमें तपधर्म का गणन रिया ॥७॥

उत्तम त्याग धर्म

अब त्याग धर्मका वर्णन करें हैं । त्याग ऐसे जानना— जो मपदादि परिग्रहह कर्मका उदयजनित पराधीन अर बिनाशीरु अर अभिमान को उपजावने वाली, तप्याह

ध्यायेन शाली, गम्यते की तीव्रता करनेवाली, विवाहिक वंश
 पापनिश मूल जानि उत्तम पुण्य याह अर्थात् ही नाई
 मिया न धन्य है । जो रोई याह अगारर हरि याह
 दलादन-मि ममान जानि चीम ठग सी ज्यों न्याग दिया
 तिनकी अचिन्त्य महिमा है । अर इह चीमनि क तीव्र राग
 भाव मन्द हुआ नाई यातैं सकल त्यागनेह ममध नाई,
 अर मरागधर्म म रुचि धारैं है अर पापन मयभीत है त इन
 धनह उत्तम पात्रनिक उपकारक अथि दान म लगारैं है,
 अर जे धर्मक सेवन करने बाने निघन जन हैं तिनके अथ
 ग्यादिशरणि उपकार करने म घन लगारैं है तथा धर्म क
 आयतन जिनमन्दिरादिबनि म निर्गमिद्वान्त लिराप देनेम
 तथा उपकरण में, पूजनान्त्रिक प्रभागा म लगारैं है तथा
 दु गित दग्दिरी रोगीनि के उपकार म नन मन धन करणा
 धान होय लगारैं है त धन जीतव्यह सकल करै है । दान
 हैं सो धर्म का अंग है । यातैं अपनी शक्ति प्रमाण भक्ति
 करि गुणनि क धारक उज्ज्वल पात्रनि को दान दना है
 सो परलोकर जायैं महान् सुखमामग्रीह ले जायै है, सो
 निर्विघ्न स्वगत तथा भोगभूमिह प्राप्त करन सला जानों ।

दानकी महिमा सो अनानी सलगोपाल ह कहै है । जो
 पूर्व दान दिया है सो नानाप्रकार सुखमामग्री पाई है, अर
 देगा सो पायेगा । ततैं जो सुख-ममदा का अर्धी होय सो

गन ही में अनुगण करो । जो तेरा हस्त देखे
 है तो उदाहृ तात्र अनुगणिले नरे नरे नरे
 गति पाव नात्र निगान्क दद ज्ञ होवे, कस
 लार जायगा ? घन पावना के नरे नरे नरे । न
 रहित सा घन घोर दु मनेक सनेक ॥ कस ते
 रदा ह कपल घोरनिशक पति है कस कस नरे
 नादा कहें हैं । कपल कस कस कस कस
 है । जामें आंगुल दोष ह दोष द न द नरे नरे
 है । गानी सा दोष नरे नरे है । नरे नरे
 रति नगमें विख्यात होर है । नरे नरे है नरे
 है, अपना दिन कने कने नरे नरे । नरे
 दान बडा है । थोड़ासा नरे नरे नरे नरे
 वाला भोग भूमिका नरे नरे नरे नरे
 म आय है । दान दना ही नरे नरे नरे नरे
 मयुक्त स्नेह का वचननरे नरे नरे नरे
 ते ऐसा अमिमान नादा कहें है नरे नरे नरे
 है । दानी तो पावक अना नरे नरे नरे नरे
 हैं ? जा लोम नरे नरे नरे नरे नरे नरे
 कौन नरे, पावकना लोमनरे नरे नरे नरे
 रिना नगार क उदाह कस कस नरे नरे
 घर्मा मानननि क तो पावक नरे नरे नरे

देने समान अन्य कोई आनन्द नहीं है । उदारता धना
दयपना, प्रानीपना पापा हैं तो दान में ही उद्यम करो ।
छत्राया के जीवनिक अमयदान दहु, अमन्य का त्यागकरि
बहु आरम्भ के घटावनहार दमि मोधि मलना, धरना,
पत्नाचार विना निर्दयी होय नहीं प्रवर्तना । किसी प्राणी
मात्र में मन वचन कायते दू रिग मति करो । दृष्टिनि की
धरणा ही करो, यो ही गृहस्थ के अमयदान हैं । यार्ते
मसार में जन्म, मरण, रोग, शोक, दारिद्र्य, त्रियोगादि
मताप का पात्र नहीं होयोग ।

रहुरि समार के बघारने वाले, हिमालय पृष्ट करने वाले
तथा मिथ्या धर्म की प्रहृषणा करने वाले तथा युद्धशास्त्र,
शृङ्गारशास्त्र, मायाचार के शास्त्र, वैद्यकशास्त्र, रस रमायण
मंत्र चर भारण उगीरुणादिक शास्त्र के नष्ट
हैं । इनके अति श्रुते ही त्यागि भगवत्

कहा, दयाधर्मक अरु

का प्रशश करने

करने वाले शास्त्रनिक

आत्मा का उद्धार के

मन्तानकू ज्ञानदान

इच्छुक तिनकू

दानक अधि पाठशाला

ज्ञान हा है । जहां ज्ञानज्ञान होयगा तहां धर्म रहेंगा, यानें ज्ञानदान में प्रवर्तन पावै है ।

बहुतेर रोग का नाश करने वाला आयुष्य औषधि का दान करो । औषध दान बड़ा उपकारक है अरु रोगीरु तैयार औषधि मिलै है ताका पड़ा आनन्द है । अरु निर्जन होय तथा जाक ठटल करने वाला नार्हा होय, ताक औषध जो रूरी हुई तय्यार मिल जाय तो निर्जनितरा लाभ-ममान मानै है, औषध लेय निरोग होय है सो ममस्त प्रत, तप, मयम पालै है, ज्ञान का अभ्यास करै है । औषधदान है ताक वा मन्त्रगुण स्थितिस्मरणगुण, निर्निषिद्धिमागुण इत्यादि अनेक गुण प्रगट होय है । औषधदान क प्रमार्ग रागरहित देयनिका वैदिकिक दण पावै है ।

बहुतेर आहारदान ममस्तदाननिर्म प्रधान है । प्राणारो जीवन शक्ति बल पुष्टि य ममस्त गुण आहार बिना नष्ट हो जाय है । आहार दिया सो प्रार्थीरु जीवन पुष्टि गरि ममस्त दाना । आहारदानने ही मुनि श्रावक का ममस्त धर्म प्रवर्त है । आहार बिना मार्ग अष्ट हो पाय । आहार है सो ममस्त रोग का नाश करने वाला है । जो आहार दान द है सो सिध्दिराष्टि ह भोगभूमि में कल्पवृक्षनि का दशाग भोगरु अमम्यात कान भोग और सुधानपात्रिक की बाया रहित ह्या आरुनाप्रमाण तीन त्रिक आहार मोचन करै ।

ममस्तु दुःखक्लेशाद्दिन असंख्यतत्परं सुख भोगि दवलोरनि
 म जाय उपज है । यार्त धनक पाय च्यार प्रकार के दान
 देने ॥ प्रवर्तन करो । अर जो निर्धन है तो ह अपना
 भोजन म तैं जेता बनै तेता दान करे । आपकू आधा
 भोजन मिलै तीमै तैह ग्राम दोषग्राम दुःखित पुभुनिन दीन
 दगिद्रीनि क अर्थ दबा ।

बहुरि मिष्टमचन सोलने का बड़ा दान है, आदर
 मत्सर विनय करना, स्थान देना, कुशल पूछना ये महादान
 हैं । बहुरि द्रष्ट रिक्त्पनि का न्याग करो, पापनि म प्रवृत्ति
 का त्याग करो, चार उपायनिका त्याग करो, रिक्त्था करने
 का त्याग करो, परक दोष मत्स्य, अमत्स्य कदाचित् भति
 रहो । बहुरि अन्याय का धन ग्रहण करने का दूर ही है
 त्याग करो । भो नानीवन हो ! जो अपना हित क इच्छुक
 हो तो दुखिजननिह तो दान करो, अर सम्यग्दर्शन
 सम्यग्ज्ञानादि गुणनि क धार्मिकनि का महारिणय मन्मान
 करो, ममस्तु जीवान म वरुणा करो, मित्र्यादर्शनका त्याग
 करो, रागद्वेषमोह क धारक बुद्ध अर आग्नि
 धारक मेधधारी, अर हिंसा क पोषक
 वाले, मिथ्यादृष्टिनि क शास्त्र स्तुत
 करने का त्याग करो ।
 निग्रह करने म बड़ा

अप्रिय वचन, गाली के वचन, अपमान के वचन, मदमदित वचन कदाचिद् मति कहो । इत्यादिक जो पर कं दु ए के शरत् तथा अपना यशहू नष्ट करने वाला, धर्महू नष्ट करने वाला मन, वचन, कायके प्रवर्तन का त्याग करो । ऐसे त्यागधर्म का सुखेय वर्धन किया ॥ = ॥

उत्तम आर्किचन्य धर्म

अब आर्किचन्य धर्म का स्वरूप कहिये है । जो अपना ज्ञान-ज्ञानमय स्वरूप बिना अन्य किंचिमात्र हू हमारा नहीं है, मैं किसी अन्य द्रव्य का नहीं हूँ, मेरा कोई अन्य द्रव्य नहीं है, ऐसा अनुमनहू आर्किचन्य कहिय है । मो आत्मन् ! अपना आत्माहू देइतै भिन्न अर ज्ञानमय अन्य द्रव्य की उपमारदित अर स्पर्शमगधर्षरहित अर अपना आघात ज्ञानानन्दसुखरति पूर्ण परम अनीन्द्रिय मय रहित ऐमा अनुमन करो ।

भावार्थ—यह दह है मो मैं नहीं, देह तो रस रश्मि हाड मांस चामसय नद अचेतन है । मैं हम देइतै अन्यन्त भिन्न हूँ, ये ब्राह्मण क्षत्रियादिक जाति-कून दह क हूँ, मेरे य नहीं हैं । स्त्री, पुरुष, नपुंसक लिंग देइक है, मेरे नहीं । मो गोरापना, सावलापना, राजापना, रङ्गपना, स्वामिपना, संवरपना, पाण्डितपना, मूर्मपणा इत्यादि ममन्त रचना कर्म

उदयजनित देह के हैं, मैं तो प्रायक हूँ। ये देह का
 म्वन्धी मेरा स्वरूप नहीं है, मेरा स्वरूप अन्य द्रव्य का
 पमारहित है। ताना, ठंडा, नरम, कठोर, लूँछा, चीरना,
 लका भारी अष्ट प्रकार स्पर्श हैं ते हमारा रूप नहीं, पुद्गल
 रूप हैं। ये छाटा, मोटा, कड़वा, कपायला, चिपरा पच
 कार रस, अर सुगन्ध दुर्गन्ध दोष प्रकार का गंध, अर
 मला, पीला, हरा, श्वेत, रक्त ये पच वर्ण मेरा स्वरूप
 नहीं, पुद्गल का है। मेरा स्वभाव तो सुम्भकरि परिपूर्ण
 है, परन्तु कर्म का आधारिन दुराकरि व्याप्त होय रखा हूँ। मेरा
 स्वरूप इन्द्रिय रहित अर्वाद्रिय है। इन्द्रिया पुद्गलमय कर्म-
 करि की हुई हैं, मैं ममस्त भय रहित, अविनाशी, असङ्ग,
 आदि-अतरहित, शुद्ध ज्ञानस्वभाव हूँ परन्तु अनादिकालत
 जैसे सुरा अर पापाण मिल रखा है तस, तथा दीन-नीर
 ज्यों कमनि करि अनादिका मिल रखा हूँ। तिनमें हूँ
 मिथ्यात्वनाम कर्म का उदयकरि अपना स्वरूप का ज्ञान
 रहित होय दहादिक परद्रव्यनिष्ठ अपना स्वरूप जानि
 अनतकालत परिभ्रमण किया। अब कोऊ निचित आवर-
 शादिक क दूर होन तैं श्रीगुरुनिका उपदेश्या परमागम के
 प्रमादतैं अपना अर यरना म्वम्प का ज्ञान भया है। जैयै
 रत्ननिके व्यापारी सदेहुष पच वर्ण रत्ननि के आभरणनि
 में गुरु की कृपानि अर निरन्तर अभ्यामतैं मिल्या हुआह

हाकिरा गग अर माणिक्य रा गगन अर तोलह अर मोलह मित्र २ जान ह तैसे परमाणमरा निरतर अम्यासते मरा नान स्वभाव म मिल्या हुआ गग डेप मोह कामादिक मेलक मित्र जाण्या डे, अर मरा ज्ञायर स्वभाव को मित्र नाण्या है । ताते अर अैसे रागद्वेषमोहान्क भाव कर्मनि म अर कर्मनिक उटयते उपजे पिनाशीक शरीर परिवार उन मपदादि परिग्रह म ममता बुद्धि मेरे जैसे कि अन्य जन्म म हूँ नाहीं उपन तैसे आर्किचन्य भाऊ ।

या आर्किचन्य भावना अनादिकालते नाहीं उपजी । ममस्त पर्यायनिक अपना रूप मान्या तथा रागद्वेषमोह-मोहनामादिक भाव कमकुत विकार य तिनह आपरूप अनुभवरि विपरीत भावनिर्ते घोर कर्मबन्धू बीया । अर मै आर्किचन्य भावना म विनसा नाश करने वाला पंच परमगुरुनिना शरयते आर्किचन्य ही निविघ्न चाहू ह और त्रैलोक्य में कोऊ अन्यस्तु कू नाहीं बाछू ह । यो आर्किचन्यपणा ही समारसमुठते तारखेह जिहाज होह । जो परिग्रहू महाबन्ध जानि छाडना सो आर्किचन्य है । आर्किचन्यपणा जाके होय है ताके परिग्रह म बाध्या नाहीं रहे है, आत्मध्यान में लीनता होय है, देहादिकनि में बाधघेप में आपो नाहीं रहे है, अर अपना स्वरूप जो स्तनत्रय तामें प्रवृत्ति होय है, इन्द्रियनिके विषयनिमें टाडुता

मन रुकि जाय है, देहमें स्नह छूटि जाय, सांसारिक दानिका सुख, इद्र अहमिद्र चक्रवर्तनिका सुख ह दुख दीखै है । इनम बाझा कैसे करै । परिग्रह रत्न सुगर्ण राज्य ऐश्वर्य स्त्री पुत्रादिकनिक जीर्णतृण में जैमें ममतारहित छाडनेमें विचार नाहीं तैमें परिग्रह छ्वाडै है । आकिचन्य तो परम वीतरागपणा, है जिनके ममारमो अत आ गयो दिनके होय है ।

जाके आकिचन्यपणा होय तारै परमार्थ होय, तारै परमार्थ जो शुद्ध आत्मा ताका विचारनेकी शक्ति प्रगट होय ही, अर पचपरमेष्ठी म भक्ति होय ही, अर दुष्ट विरन्पनिका नाश होय ही, अर इष्ट अनिष्ट मोचन म रागद्वेष नष्ट हो जाय है, केवल उदररूप खाडा भरना, अन्य रस नीरम भोजनमे विचार जाता रहे है । मयस्त धर्मनिम प्रधान धर्म आकिचन्य ही मोचना निम्न समागम करानेवाला है । अनान्कालतै जेते सिद्ध भए है ते आकिचन्यतै ही भये है अर भागै जो जो तीर्थस्त्रादि सिद्ध होंगे तो आकिचन्यपणा हीतै होंगे । यद्यपि आकिचन्यधर्म प्रधानकरि माधुवननिकै ही होय है तथापि एकदश धर्मका धारक गृहस्थ उस धर्मके ग्रहण करनेकी इच्छा करै है अर गृहाचारमें मदरागी होय अतिमिक्त होय है, प्रमाणीक परिग्रह धारै है, आगाभी बाधारहित है, अन्यायका धन परिग्रह

कदाचित् प्रदण नार्हा कर है, अल्प परिग्रहम अति सतोषी होय रहै है । परिग्रहहृ दुखमा देनेवाला अर अत्यन्त अस्थिर मानै है, ताकै ही आक्रियन्वभावना होय है । ऐमें आरिचन्यधर्मका वर्णन किया ॥६॥

उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म

अब उत्तम ब्रह्मचर्यका स्वरूप काहए है—समस्त विषयनि में अनुग्राह छांड करके ब्रह्म जो प्रायस्समाप्त आत्मा तामें जो चर्या कहिये प्रवृत्ति सो ब्रह्मचर्य है । सो धानीन हो ! या ब्रह्मचर्य नाम त्रत पदो दुर्द्धर है, हरक बापडा विषयनिक धम हुआ आमझान रहित हैं ते याहू धारवहू समर्थ नहीं हैं । जे मनुष्यानिम दरक ममान हैं ते धारवहू समर्थ हैं, अन्य रक विषयनिकी लालमारु धारक ब्रह्मचर्य धारनेहू समर्थ नहीं हैं । यो ब्रह्मचर्यत्रत महादुर्द्धर है, जाकै ब्रह्मचर्य होय ताकै समस्त इन्द्रिय अर कपायनिका जीतना सुलभ है ।

सो मन्व्य हो ! स्त्रीनिका सुख मे राजी मनरूप मदोन्मत्त हस्ती ताहू वैराग्यभावनासे रोकि करकै, अर विषयों की आशाका अमार करकै, दुर्द्धर ब्रह्मचर्य धारण करो । यो काम है सो चितरूप भूमिमें उपजै है, याही पीडाकरि नहीं करने योग्य ऐसे पाप करै है । यातैं यो काम

मनरू मथन करे हैं, मनका ध्यानरू नष्ट करे है, पार्श्वतै
 यारू' मनमय कहिये है । नाज नष्ट हो जाय तदि ही स्त्री-
 निरु महादुर्गन्ध निरु गभीररू रागी हुआ सेव है । अर
 कामरुि अध हो जाय तदि महा अनीतिरू प्राप्त होय
 अपनी परी नारी का विचार ही नार्हीं करे हैं — जो इस
 अन्यायतै मैं इहा ही मारा जाऊगा, रचा का तीव्रण्ड
 होयगा, यम मलीना होयगा, धम भए होजाऊगा, गत्या
 र्थगुद्धि नष्ट हो जायगी, मरणरुि नरकनिमे घोर दु ख
 असंख्यातकाल पर्यंत भोगि फिर असंख्यात नियंचनिक
 दु खरूप अनेकभय पाय बुमानुपनिमें अन्या, लूला, दूषडा,
 दरिद्री, इन्द्रियरिक्ता, बहिरा, गूगा, तथा अपाहिज, कुल
 नीच में उपनि फिर श्रम—स्थानरनिम अनन्तकाल
 परिभगण करूगा—एमा सत्य विचार कामीरू नार्हीं
 उपनै हैं । इस कामक नाम ही जगतके जीरनिरू प्रगट करे
 हैं । क कहिये रोटो दर्प अथात् गर्व उपजावे ' तातै कडर्प
 कहिये है । अति कामना जो बाछा उपजाय दू खित करे तातै
 शकू काम कहिये है । याकरि अनेक नियंचनिके तथा
 मनुष्यनि के भगनिम लड़ि-लड़ि मरिय तातै मार कहिये है ।
 सवरको बरी तातै सरारि कहिय । मद्य जो तप सयम
 तातै सुत्रति कहिये चलायमान करे मद्य कहिये ।
 इत्यादिक अनेक दोषनिक नाम ही कहै हैं । या जानि

मनवचनकायर्त अनुरागकरि ब्रह्मचर्य ग्रत पालो । ब्रह्मचर्यकरि
सहित ही मसारक पार जायोगे । ब्रह्मचर्य विना ग्रत तप
समस्त असार है । ब्रह्मचर्य विना सकल कायक्लेश निष्फल
है । चाय जो स्पर्शनइन्द्रियका सुखत विग्रह होय, धम्मन्तर
परमात्मस्वरूप आमा ताकी उज्ज्वलता देखहु । जैसे अग्ना
आमा कामक रागकरि मलीन नाहीं होय तैसे यत्न करो ।
ब्रह्मचर्यकरि ही दोऊ लोक भूषित होय है ।

बहुरि जो शीलकी रक्ष। चाहो जो अर उज्ज्वल यश
चाहो हो अर धर्म चाहो हो अर अपनी प्रतिष्ठा चाहो हो
तो चित्तमें परागमागमकी शिषा इस प्रकार धारण करा—
स्त्रीनि की कथा मति श्रवण करो, मति कहो । स्त्रीनिरा
गग-रग कुतूहल चेष्टा मति देखो । ये मेला देखना परिणाम
मिगाई है । व्यभिचारी पुरुषनिरी मङ्गलिका त्याग करना,
भांग जरदा मादक्यस्तु भक्षण नाहीं करना, साम्पूल तथा
शुष्पमाला अतर फुलेलाटि शीलमङ्ग, ग्रतमङ्गक कारण
दूरतें टालो, गीतनृत्यादि कामोदीपनके कारणनिका परिहार
करो, गात्रिमक्षण टालो, निहार करनका कारण लोकरिरुद्ध
वस्त्र आभरण मति पहरो, एकान्तमें कोऊ ही स्त्री मात्र
का ममर्ग मति करो, रसना इन्द्रिय की लम्पटता छाडो ।
जिह्वारी लम्पटवारी लार हजारों दोष आयै है यातें समस्त
ऊ चापणो यश धर्म नष्ट हो पाय है । जिह्वा इन्द्रियका

लम्पटीक सन्तोष नष्ट होजाय, समभावही स्वप्नमें ही नहीं जानै, लोक-पण्डित भ्रष्ट हो जाय । ब्रह्मचर्य भङ्ग होजाय पार्ते आत्माके हितका इच्छुन एक ब्रह्मचर्यही ही रखा करो ।

ऐसे धर्मके दशलक्षण सबेरे भगवान ने कहे हैं । चाके ये दश चिन्ह प्रगट होय तारु धर्म है । उत्तमधर्मादिकनिके घातरु धर्मके बेरी मोधादिक है, तिनतै अनेक दोष उपजै है, तिनको दूर करो । भर धर्मादिकनिमें अनेक गुण है तिनकी मानना बारम्बार मदैय भावो ।

उपसंहार

जो धर्मा है सो अपना प्राणनिही रखा है, धनकी रखा है, यशकी रखा है, धर्मकी रखा है, अतशीलमयम मत्पकी रखा एक धर्मातै ही है, कलहके घोर दु खतै अपनी रखा एक धर्मा ही करै है । समस्त उपद्रव तथा वैरतै धर्मा ही धर्मा करै है, बहुरि क्रोध है सो धर्म अथ काम मोक्षका मूलतै नाश करै है, अपना प्राणनिका नाश करै है, क्रोधतै प्रचण्ड रौद्रध्यान प्रगट होय है । क्रोधी एक क्षणमात्रम आष मणि जाय है, क्वारम बारही मे तालाब नदी समुद्रमे इवि मरै है, शस्त्रघात, विषमक्षण, भ्रमापातादि अनेक कुसमकरि आत्मघात करै है । अन्यके मारनेकी क्रोधीके दया नाही होय सो अपने पिता कू

पुत्र, प्राजा, मित्र, स्वामी, सेवक, गुरु, एक
 क्षमात्र में मारे हैं। क्रोधी घोर नरक का पात्र है। क्रोधी
 महा मयङ्कर है, समस्त धर्म का नाश करनेवाला है। क्रोधी के
 वचन नहीं होय है, आपक और धर्म ममभावक दग्ध
 करनेवाला वचनरूप अधिक लगते हैं। क्रोधी होय तो
 धर्मात्मा, सयमी, शीलवान् मुनि और आचरणीक चोरी
 अन्यायक झूठे दोष कलक लगाय दूषित करें हैं। क्रोध
 के प्रभावतः ज्ञान, बुद्धि होय है, आचरण विपरीत होनाय,
 भ्रष्टान् भ्रष्ट होजाय, अन्यायमें प्रवृत्ति होनाय है, नीतिका
 नाश होय है, अनि हठी होय विपरीत मार्गका प्रवर्तक
 होय है, धर्म-अधर्म, उपकार-अपकारका विचार रहित
 कृतज्ञी होय है। यहाँ वीतरागधर्म के अर्थी हो तो क्रोध
 मात्र कदाचित् प्राप्त मति होइ।

बहुरि मार्दव जो कठोरतारहित कोमल परिणामी जीव
 में गुरुनिका बड़ा अनुग्रह बत है। मार्दव परिणामी
 साधुपुण्य ह साधु माने हैं, तार्ने कठोरतारहित पुरुष ही
 ज्ञानका पात्र होय है। मानरहित कोमल परिणामीक जैमा
 गुण ग्रहण कराया चाहें तथा जैसी कला सिखाया चाहें
 तैसी कला गुण प्राप्त हो जाय है। ममस्त धर्म का मूल
 समस्त विद्याका मूल विनय है। विनयवान् समस्तके प्रिय
 होय है। अन्य गुण जामें नहीं होय तो पुण्य ह विनयवै.

मान्य होय है । मिनय परम आभूषण है । कोमल परिणाम
 म ही दया बसे है । मार्दव स्वर्गलोककी
 सम्पदा, निराणकी अविनाशीक सम्पदा प्राप्त होय है ।
 अर कठोर परिणामीक शिवा नाहीं लागे है । साधु
 पुरुष है तिनका परिणाम ह अमिनयी कठोर परिणामीक
 दूरहीतें त्यागा चाहै है । जैमें पापाणम जल नाहीं प्रवेश
 करै तैसैं मयगुरुनिका उपदेश कठोर पुरुष का हृदयम
 प्रवेश नाहीं करै है । जतैं जो पापाण काष्ठाद्रिक ह नरमाई
 लिए होय ताका तो बाल बाल मात्र ह जहां घट्या चाहैं,
 धीन्या चाहैं, तहा बालमात्र ही उतरि आवे, तदि जैमी
 धरत मूरत बनाया चाहैं तैमें ही बने हैं । अर कोमलता
 रहितम जहा टांघी लगाव तहा रिटर उतरि दूर पड़े,
 शिल्पीरा अमिश्राय माकिर घटाई म नाहीं आवै ।
 तैमें कठोर परिणामीक यथाक्त् शिवा नाहीं लागे,
 अमिमानीका समस्त लोक बिना रिया बरी होय है, पर-
 लोकम अति नीच तिर्थच अर मनुष्यनि म अक्षरन्यायकाल
 नाना तिरस्कारका पात्र होय है । यतैं कठोरता त्यागि
 मार्दवभावन ही निरन्तर धारण करो ।

बहुति कपट ममस्त अनर्घनिका मूल है, प्रीति अर
 प्रतीतिका नाश करनेवाला है, कपटी में असत्य छल
 निर्दयता विद्यामवातादि समस्त दोष बसैं है, कपटीम गुण

नाहीं, समस्त दोषही दोष वाम कर है । मायाचारी यहा अवशक पाय तियेच नग्नादिक गतिनिमें अमोल्यान कान भ्रमण करै है । मायाचाररहित आर्नधर्मका धारण में समस्त गुण वमें है, समस्त लोकनिह प्रीतिका अर प्रतीतिका कारण होय है, परलोकमें देवनिह पूज्य इन्द्र शर्वादिह होय है यातें सरलपरिणाम ही आत्माका हित है । बहुति सत्यवादी में समस्त गुण तिष्ठै हैं, मशाल पपनादि दोषरहित जगतम मान्यताहू ह प्राप्त होय है । अर परलोकमें अनेक देव-मनुष्यादिक जाकी आज्ञा यस्तक ऊपर धरै है । अर असत्यवादी इहा ही अपराध निन्दा करने योग्य होय है, समस्त क अप्रतीतिका कारण है, बाधव-मिश्रादिक ह अग्रा करि छडै हैं, रानानिह जिह्वादेह सर्वस्व-हरणादिक दण्ड पारै हैं, अर परलोकमें तियेच गति में रचन-रहित, एकन्द्रिय, रिक्लत्रयादि अस्त रयात पर्याय धारै है । यातें सत्यधर्मका धारण ही भ्रेष्ट है ।

बहुति जाका शुचि आचरण होय सो ही जगत म पूज्य है । शुचि नाम पवित्रता उज्ज्वलताका है । जाकी आहार निहारादिक समस्त प्रवृत्ति हिसारहित अर हिंसा का भय, तें यत्नाचारसहित होय, अर अन्य के धन म, अन्य की स्त्रीमें कदाचित् स्वप्न म बाछा नाहीं होय सो ही उज्ज्वल आचरण को धारक है । तिसक ही जग-

पूज्य माने हैं। निलोभी का ममस्त लोक विश्राम का है, सो ही लोक में उत्तम है, उपलोक का पात्र है। मोम रहित का पद उज्ज्वल यग प्रकट है। लोभी मरामर्तीन समस्त दोषनिरा पात्र है, निघर्म में लोभी की प्राप्ति होय है। लोभी क पाप-प्रसाध, गान्-असाध, कृत्य-अकृत्य का विचार ही नहीं होय है, इसी ह लोक में निन्दा, धर्मतै पगट्-धुम्बता निर्दयता प्रकट दक्षिण है। लोभी धर्म अथ कामरू नष्टकरि कृमरुणरि दुगति जाय है। लोभीरा हृदय में गुण अग्राश नहीं पाय है। इस लोकमें परलोक में लोभीरू अधिप क्लेश दग्ध प्राप्त होय है, यानें गान्-धमका धारण ही श्रेष्ठ है।

बहुरि सयम ही आत्मा का हित है। इस लोक में सयमका धारक समस्त लोकनिके बन्दने योग्य होय है। समस्त पापनिरि नहीं लिपे है। याही इसलोकमें परलोक में अर्चित्य मदिमा है। अर अमयमी है मो प्राणनिका घात अर विषयनिमें अनुरागरि अशुभ कर्म का बन्ध करे है। यानें सयम धर्म ही जीव का हित है। बहुरि तर है सो कर्मका सपर निर्जरा करनेका प्रधान कारण है आत्माह कर्ममलगदित करे, तपका प्रमात्रें यही हैं आदि प्रकट होय है। तपका अर्चित्यप्रभाव है कामरू निद्राक फोन मारे ? य बाधक

इन्द्रियनिक रिपनि को मारने में तप ही ममथ है । आशारूप पिशाचणी तभीतैं मारी जाय है । कामका विजय तपहीतें होय है । तपका साधन करनेवाला परीषह उपसर्ग आवते हू रत्नत्रयधर्मतैं नाहीं छूटै । यातैं तपधर्म ही धारण करना उचित है । तपसिना मसारतैं छूटना नाहीं है । जातें ब्रह्मीपनाका हू राज्य छाडि तप धारै सो त्रैलोक्य में धन्दनेयोग्य पूज्य होय है । अर तपइ छाडि राज्य ग्रहण करै सो अनिनिद्य पुण्यकार करने योग्य होय, तथैत हू सघु होय । यातैं त्रैलोक्य में तप-समान महान् अन्य नाहीं ।

बहुनि परिग्रह समान मार नाहीं, जेते दुःख, दुष्परिणाम, बलेश, वैर, वियोग, शोक, भय, अपमान हैं ते ममस्त परिग्रह के इच्छुक हैं । जैमें २ परिग्रहतैं परिणाम निराला होय तैमें २ खेदरहित होय है । जैसे बड़ा भारकरि दुखित पुरुष भाररहित होय तदि सुखित होय, तैमें परिग्रहकी वासना भिटै सुखित होय है । समस्त दुःख अर ममस्त यापनिका उपजावनेका स्थान अह परिग्रह हैं । जैमें नदीनिकरि समुद्र तप्त नाहीं होय अर ई धनकरि अपि वृत्त नाहीं होय है तैसे आशारूप खाडा बड़ा अगाध है, जाका प्रलम्भ नाहीं, ज्यों ज्यों यामें धरो त्यों त्यों खाडा बढता जाय, जो आशारूप खाडा निचिनिर्तैं नाहीं भरै सो अन्य संवदातैं कैमें भरै ? अर ज्यों ज्यों परिग्रहकी आशा का स्थान

फरो त्पो त्पो भरतो चन्धा जाय, तर्त समस्त इ त द्रि
करनेर त्याग ही ममघ है । त्यागहीर्त अन्तरङ्ग घटिरङ्ग
यधनरहित अनन्तसुरके धारक होदुगे । परिग्रहके यधनम
यधे जीव परिग्रह त्यागर्त ही सृष्टि सृष्टि होय । तर्त त्याग
धर्म धारण ही थेट है । यहूरि हे आ-मन् ! वो दह अर
स्त्री पुत्र धन धान्य राज्य ऐश्वर्यादिकनिम एक परमाणुमात्र
ह तुम्हारा नाहीं है । पुद्गलद्रव्य है, जड़ विनाशीय है,
अचेतन है, इन परद्रव्यनिर्म 'अह' ऐसा सकल्प तीव्र
दर्शनमोहकर्मरा उदय विना कौन करारै ? इम परद्रव्य में
आत्मसकल्प मेरे कदाचित् मति होह, मैं अन्विचन ह ।
या अन्विचन्य भावना क प्रभातै कर्म का लेपरहित यदा
ही समस्त यधरहित हुआ तिष्ठै है, साक्षात् निर्वाण का
कारण अन्विचन्यधर्म ही धारण करो ।

बहुनि कुशील महापाप है, समार परिग्रमण का बीजहै ।
ब्रह्मचर्य के पालने वालेतैं हिसादिक पापनिका प्रचार दूरि
भागे है, समस्त पुणनिर्भी सषदा यामें यसे है, जितेंद्रियता
प्रकट होय है । ब्रह्मचर्यतैं कुल-जायाहि भूषित होय है,
परलोक में अनेक आदिका धारक महद्विक देव होय है ।

ऐसे भगवान् अरहत दवाधिदेवक मुखारविंदतैं प्रकट
हुआ दशलक्षण धर्म आभाका स्वभाह है, पर वस्तु नाहीं

है, क्रोधादिक कर्मनित उपाधि दूरि होत स्वयमव
 श्रमा का स्वभाव प्रगट होय है। क्रोधके अभावतैं दमा-
 गुण प्रगट होय है, मानके अभावतैं मार्दवगुण प्रगट होय
 है, मायाके अभावतैं धार्मिकगुण प्रगट होय है, लोभके
 अभावतैं शौचधर्म प्रगट होय है, असत्य के अभावतैं
 सत्यधर्म प्रगट होय है, कषायनिक अभावतैं 'मयमगुण
 प्रगट होय है, ईडाके अभावतैं तपगुण प्रगट होय है।
 कामे समता क अभावतैं त्याग धर्म प्रगट होय है, परद्रव्यनितैं
 निज अपने आमानुभव होनेतैं आरुचिन्यधर्म प्रगट
 होय है, वदनिके अभावतैं आत्मस्वरूपमें प्रवृत्तिनैं ब्रह्मचर्य
 धर्म प्रगट होय है।

यो दश प्रकार धर्म आमाका स्वभाव है। यो धर्म
 क्रियातैं सोस्या सुखें नाहीं, लूट्या छुटें नाहीं, चोर चोरि
 छुटें नाहीं, रानास्य लूट्या छुटें नाहीं, स्वर्णमें परदेशम
 सदा पाका स्वर्ण छुटें नाहीं, किमीका विगाज्या विगडै
 नझी, धनकरि मोल आवै नाहीं, आकाशम, पातालम
 दिशमें, पहाड़में, जलमें, तीर्थमें, मन्दिरमें कहीं धरथा
 नहीं, आत्माका निज स्वभाव है। पाका लाम सम्पन्नान
 भद्रानतैं होय है। अर एसा सुगम है जो बालक-शूद्र-युवा,
 धनवान्-निषेध, बलवान्-निर्बल, सहायमहित-असहाय, रोगी
 निरोगी समान्ते घाण्य करनेमें आवने योग्य स्वाधीन है।

धर्मके धारणमें कुछ खेद, क्लेश, अपमान, भय, विपाद, कलह, शोक, दुःख वदाचिन् नहीं, दुर्लभ है नहीं, बोझ उठाना नहीं, दूरेदेश जानना नहीं, छुधा वृषाशीत ठण्ठ तापी वेदनाका आनना नहीं, किमीरा विमम्बाद भगड़ा है नहीं, अत्यन्त सुगम, समस्त क्लेश-दुःख-रहित स्वाधीन आत्माया ही सत्य परिणमन है । यार्तें समस्त मसार-परिभ्रमणर्तें छूटि अनन्तज्ञान दर्शन सुख धारक सिद्ध अवस्था पाया फल है ।

ऐसे दश लक्षण धर्म का मछेपकरि वर्णन कियो ।



